BPSC-102

संवैधानिक सरकार और भारत में लोकतंत्र

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर डी. गोपाल (अध्यक्ष)
राजनीति विज्ञान संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली, 110068

प्रोफेसर ए.के सिंह
फेडरल अध्ययन केन्द्र
जामिया हमदर्द विश्वविद्यालय
नई–दिल्ली

प्रोफेसर अनुराग जोशी
राजनीति विज्ञान संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली, 110068

प्रोफेसर एस. वी. रेड्डी
राजनीति विज्ञान संकाय,
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू,
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली

प्रोफेसर अमित प्रकाश
लॉ एवं गर्वेनस अध्ययन केन्द्र, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई–दिल्ली

प्रोफेसर सार्तिक बाग
राजनीति विज्ञान विभाग, बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर, राय बरेली, रोड़, लखनऊ

प्रोफेसर जगपाल सिंह
राजनीति विज्ञान संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली, 110068

पाठ्यक्रम तैयार करने वाली टीम

खण्ड और इकाई	इकाई लेखक
खण्ड 1 संविधान सभा और संविधान	
इकाई 1 संविधान का निर्माण	प्रोफेसर जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विद्यापीठ, इग्नू
इकाई 2 दार्शनिक पृष्ठभूमि	प्रतिप चटर्जी, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, कल्याणी विश्वविद्यालय, नदिया, पश्चिम बंगाल
इकाई 3 प्रस्तावना	प्रोफेसर जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू
इकाई 4 मौलिक अधिकार	डा. दिव्या रानी, अकादमिक ऐसोसियेट, राजनीति संकाय, इग्नू
इकाई 5 राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत	डा. दिव्या रानी, अकादमिक ऐसोसियेट, राजनीति संकाय, इग्नू
इकाई 6 मौलिक कर्तव्य	जयंत देबनाथ, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान संकाय, मृनालिनी दत्ता, महाविद्यापीठ, कोलकता
खण्ड 2 सरकार के अंग	
इकाई 7 विधायिका	प्रोफेसर प्रलय कानूनगो, राजनीति अध्ययन केन्द्र, जे.एन.यू. नई दिल्ली
इकाई 8 कार्यपालिका	प्रोफेसर विजयशेखर रेड्डी, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 9 न्यायपालिका	प्रोफेसर विजयशेखर रेड्डी, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली
खण्ड 3 संघवाद और विकेन्द्रीकरण	
इकाई 10 शक्तियों का विभाजन	प्रतिप चटर्जी, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, कल्याणी विश्वविद्यालय, नदिया, पश्चिम बंगाल
इकाई 11 आपातकालीन प्रावधान	जयंत देबनाथ, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान संकाय, मृनालिनी दत्ता, महाविद्यापीठ, कोलकता
इकाई 12 पाँचवी और छठी अनुसूची	डा. नोंगमेंथेम किशोर चंद सिंह, अकादमिक एसोसिएट, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 13 स्थानीय स्व–शासन	डा. विनायक नारायण श्रीवास्तव, पूर्व फेलो, नेहरु स्मारक एवं पुस्तकालय, नई दिल्ली, और डा. गुरूपदा सरन, स्कूल ऑफ कन्टीन्यूइंग एडुकेशन, इग्नू,

पाठ्यक्रम संयोजक : प्रोफेसर जगपाल सिंह

सामान्य संपादक : प्रोफेसर जगपाल सिंह

अनुवादक : डॉ. गिर्राज प्रसाद बैरवा, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रूफरीडिंग एवं वैटिंग : डॉ. दिव्या रानी अकादमिक असोसिएट, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

सामग्री निर्माण

श्री मंजीत सिंह
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

अप्रैल, 2019

© इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2019

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कृति का कोई भी अंश, मिमियोग्राफ या किसी भी अन्य रूप में, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी अन्य व्यक्ति द्वारा पुनरुत्पादित नहीं किया जा सकता है।

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेजर टाइप सेटिंग : टेसा मीडिया एण्ड कम्प्यूटर, C-206, A.F.Enclave-II, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम सामग्री (विषय सूची)

			पृष्ठ संख्या
खण्ड	**1**	**संविधान सभा और संविधान**	**5**
इकाई	1	संविधान का निर्माण	7
इकाई	2	दार्शनिक आधार	19
इकाई	3	प्रस्तावना	26
इकाई	4	मौलिक अधिकार	33
इकाई	5	राज्य के नीति नीति निर्देशक सिद्धांत	43
इकाई	6	मौलिक कर्तव्य	51
खण्ड	**2**	**सरकार के अंग**	**61**
इकाई	7	विधायिका	63
इकाई	8	कार्यपालिका	74
इकाई	9	न्यायपालिका	85
खण्ड	**3**	**संघवाद और विकेन्द्रीकरण**	**97**
इकाई	10	शक्तियों का विभाजन	99
इकाई	11	आपातकालीन प्रावधान	108
इकाई	12	पाँचवी एवं छठी अनुसूची	115
इकाई	13	स्थानीय स्व–शासन	127
संदर्भ सूची			**140**

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पाठ्यक्रम परिचय

यह पाठ्यक्रम भारत में संविधानिक सरकार और लोकतंत्र के विभिन्न पहलुओं के बारे में आपको जानकारी प्रदान करता है। यह संविधान में उल्लेखित लोकतांत्रिक मूल्यों के बारे में आपको परिचित कराता है तथा नागरिकों के बीच संबंधों, राज्य एवं नागरिकों के बीच संबंधों, राज्य की विभिन्न इकाइयों के बीच संबंधों जैसे केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और स्थानीय सरकार एवं राज्य के विभिन्न अंगों जैसे कार्यपालिका, विधायिका, तथा न्यायपालिका के बीच संबंधों के बारे में जानकारी प्रदान करता है। जैसा कि आप इस पाठ्यक्रम की विभिन्न इकाइयों में पढ़ेंगे, भारत का संविधान लोगों को शासन प्रदान करता है। जिसमें उनके अधिकार, उनका सम्मान तथा संप्रभुता सुरक्षित रहती हैं। संविधान के प्रावधान सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषायी बहुलवाद की भी रक्षा करते हैं। इसमें कुछ आपातकालीन प्रावधान भी दिए गए हैं जो कि लोगों के अधिकारों पर प्रतिबंध लगाता है। ये प्रावधान विभिन्न प्रकार की आपातकालीन स्थितियों के प्रावधान है।

इस पाठ्यक्रम में 13 इकाइयों की चर्चा की गयी है। सार के आधार पर ये इकाइयाँ तीन खण्डों (ब्लाक्स) में विभाजित है। खण्ड एक संविधान सभा और संविधान के बारे में है। खण्ड दो सरकार के अंगों से संबंधित है। और खण्ड तीन संघवाद और विकेन्द्रीयकरण की चर्चा करता है। इन इकाइयों एवं खण्ड का परिचय प्रत्येक खण्ड के शुरू में दिया गया है।

प्रत्येक इकाई में अभ्यास प्रश्न भी दिए गए हैं। प्रत्येक इकाई को पढ़ने के बाद आप इन प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास कर सकते हैं। इकाई के अंत में आप इन अभ्यास प्रश्नों के उत्तर भी देख सकते हैं। आप अपने उत्तर की जाँच इकाई में दिये गये उत्तर के साथ कर सकते हैं। लेकिन आप अपने शब्दों में उत्तर देने के लिए सावधानी बरतें।

पाठ्यक्रम के अंत में कुछ महत्वपूर्ण संदर्भ सूची भी दी गयी है। आपको सलाह दी जाती है कि आप इसका इस्तेमाल करें।

खण्ड 1

संविधान सभा और संविधान

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खण्ड 1 प्रस्तावना

भारत एक संप्रभु लोकतांत्रिक गणराज्य है। इसका अर्थ यह है कि भारत के लोग लोकतांत्रिक संस्थाओं तथा राजनीतिक प्रक्रियाओं में भागेदारी निभाते हैं तथा वे स्वयं अपना शासन चलाते है। उनके उपर कोई शक्ति या ताकत नहीं है। वे संविधान के प्रावधानों के अनुसार स्वयं शासन करते हैं। हमारा संविधान सभी नागरिकों को अधिकार एवं प्रतिष्ठा के सुनिश्चित करता है तथा भाईचारा कायम रखता है। संविधान यह भी सुनिश्चित करता है कि हमारे देश की एकता एवं अखंडता सुरक्षित रहे। यह नागरिकों के कर्तव्यों के प्रावधानों की भी व्याख्या का प्रावधान करता है और राज्य को यह निर्देश देता है कि वह लोगों के अधिकारों की रक्षा करे तथा सभी लोगों को समाज कल्याण प्रदान करें विशेषकर पिछड़े वर्ग तथा अल्पसंख्यकों के लिये कल्याणकारी कार्य करे।

भारत के संविधान को चुनी हुई संस्था अर्थात् संविधान सभा द्वारा तैयार किया गया था। संविधान निर्माण का कार्य काफी लंबा चला जिसमें संविधान सभा के सदस्यों ने काफी बहस की ताकि संविधान में उपयुक्त प्रावधान शामिल किया जा सके। यह खण्ड आपको संविधान के प्रावधानों, जिसमें अधिकार, कर्तव्य तथा नीति निर्देशक तत्व शामिल हैं, से अवगत कराता है। इस खण्ड में छः इकाई है। इकाई संख्या एक संविधान निर्माण की पृष्ठभूमि के बारे में है तथा इन विभिन्न कारकों की चर्चा करता है जिन्होंने संविधान निर्माण में अपना योगदान दिया। इकाई संख्या 2, 3, और 4 अंर्तसंबंधित है। इनका संबंध संविधान की दार्शनिक पृष्ठभूमि, प्रस्तावना तथा मूल अधिकारों से है। इकाई संख्या 5, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों की चर्चा करती है। ये सिद्धांत राज्य को निर्देश देते हैं कि वे नीतियां बना सके। इकाई संख्या 6 नागरिकों के कर्तव्यों के बारे में है जिसे उन्हें पूरा करना चाहिये।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 1 संविधान का निर्माण*

संरचना

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 भारतीय संविधान की उत्पत्ति 1858–1935

1.2.1 भारत सरकार अधिनियम 1935 एवं अन्य अधिनियम

1.2.2 नेहरू रिपोर्ट (प्रतिवेदन) 1928 : भारतीय संविधान की रचना का प्रथम प्रयास

1.3 संविधान सभा का गठन

1.3.1 क्रिप्स मिशन

1.3.2 कैबिनेट मिशन

1.3.3 संविधान सभा का चुनाव

1.4 संविधान सभा के प्रतिनिधित्व की प्रकृति

1.5 संविधान सभा की भूमिका 1946–1949

1.6 संविधान सभा की प्रमुख विशेषताएं

1.6.1 सार्वभौमिक मताधिकार और पृथक चुनाव पद्वति की समाप्ति

1.7 सारांश

1.8 उपयोगी संदर्भ

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप यह समझेंगे:

- संविधान सभा के गठन के पूर्व संविधान निर्माण के चरण;
- संविधान सभा के प्रतिनिधित्व का स्वरूप; और
- संविधान सभा में संविधान की प्रमुख विशेषताओं पर बहस।

1.1 प्रस्तावना

भारत के संविधान को 26 नवंबर 1949 को अपनाया गया ।अर्थात, इस दिन संविधान सभा ने इसे अंतरिम रूप दिया। लेकिन यह दो महीने बाद यानी 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। हालांकि संविधान के कुछ प्रावधान जैसे नागरिकता चुनाव, अस्थायी संसद एवं अन्य संबंधित प्रावधान 26 नवंबर 1949 को ही लागू हो गये थे। दो महीने बाद अर्थात, 26 जनवरी 1950 को इसे इसलिये लागू किया गया क्योंकि इस दिन 26 जनवरी 1930 को मूल आजादी मिली थी। इसी दिन यानि 26 जनवरी 1930 को भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस ने भारत की आजादी का उत्सव मनाया था। यहाँ पर यह बात गौर करने की है कि भारत का संविधान काफी लंबी प्रक्रिया एवं बातचीत की उपज है। यह इकाई भारतीय संविधान की संरचना के महत्वपूर्ण बिंदुओं से संबंधित है।

* प्रोफेसर जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विद्यपीठ, इग्नू, नई दिल्ली
यह इकाई पाठ्यक्रम एम.एच.आई–09, इकाई 34 से अनुकूलित है।

1.2 भारतीय संविधान की उत्पत्ति 1858–1935

भारत के संविधान में सभी नागरिकों के लोकतांत्रिक अधिकारों के प्रावधान मौजूद है। ये प्रावधान उन्हें भी दिये गये है जो भारत के नागरिक नहीं है। इन अधिकारों की पूर्ति के लिये विधायी संस्थानें व्याप्त है। संविधान भारत में लोकतंत्र एवं सामाजिक परिवर्तन की परिकल्पना को पेश करता है। भारतीय संविधान के निर्माण में लोकतांत्रिक संस्थाओं की उत्पत्ति की प्रक्रिया एवं अधिकार संविधान सभा के गठन से पूर्व ही शुरू हो गयी थी। लेकिन यहां यह बताना जरूरी है कि जो लोकतांत्रिक मूल्य एवं लोकतांत्रिक संस्थाऐं उपनिवेश काल में थी उनका मकसद सिर्फ औपनिवेशिक हितों को पूरा करना था जबकि संविधान सभा द्वारा किये गये प्रावधान उनके विपरीत थे। यद्यपि भारतीय संविधान दिसंबर 9, 1947 से लेकर नवंबर 26, 1949 के बीच विचार–विमर्श की उपज है, लेकिन उनकी कुछ विशेषताऐं विभिन्न अधिनियमों द्वारा पारित प्रावधान से मिली है। आप इसके बारे में नीचे दी गयी 1.2.1 उप इकाई में जानकारी प्राप्त करेंगे।

1.2.1 भारत शासन अधिनियम 1935, एवं अन्य अधिनियम

ईस्ट इंडिया कंपनी से ब्रिटिश शासन को सत्ता हस्तांतरण के पश्चात, ब्रिटिश संसद भारत के मामलों के व्यवस्थापन में लिप्त हो गयी। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये, 1885 से 1935 तक औपनिवेशिक शासन द्वारा कई प्रकार के शासन अधिनियम लागू किये। भारत सरकार अधिनियम 1935 इनमें से एक महत्वपूर्ण अधिनियम था। इस इकाई में आप इस अधिनियम से पहले अन्य अधिनियमों के बारे में अध्ययन करेंगे। इन अन्य अधिनियमों में सबसे पहले 1858 का भारत सरकार अधिनियम था। इस अधिनियम के द्वारा भारत में शासन का केन्द्रिकृत एवं विकेन्द्रीकृत ढ़ाँचा सामने आया। केन्द्रिकृत ढ़ाँचा वहां लागू किया गया जिसका सीधा नियंत्रण ब्रिटिश राज के अधीन था। ये क्षेत्र ब्रिटिश इंडिया प्रांत के रूप में जाने जाते थे। विकेन्द्रिकृत ढ़ाँचा वहां लागू किया गया जहाँ पर ब्रिटिश राज शाही का कोई सीधा नियंत्रण नहीं था। ये क्षेत्र भारतीय राजाओं के शासन के अधीन थे। इन्हें शाही राज्य कहते थे या देशी रियासत के नाम से जाना जाता था। इस प्रकार की व्यवस्था में राजा अपने राज्य के आंतरिक मामलों में पूर्व रूप से स्वतंत्र था, लेकिन ये ब्रिटिश नियंत्रण के अधीन थे। केन्द्रिकृत ढ़ाँचे के अंतर्गत सभी प्रकार की शक्तियां भारत के राज्य सचिव के पास थी जिसका सीधा नियंत्रण ब्रिटिश राज के पास था। वह (सचिव) राज शाही की तरफ से कार्य करता था। उनकी सहायता के लिये 15 सदस्यीय मंत्रिमंडल था। उस समय कार्यपालिका, विधायिका एवं न्यायपालिका अलग नहीं थी। ये सब भारत के सचिव के नियंत्रण में थी। ब्रिटिश शासन में सचिव की सहायता के लिये वायसराय था। वायसराय को भी कार्यकारी परिषद सहायता करती थी। जिला स्तर पर वायसराय की सहायता के लिये ब्रिटिश प्रशासक होते थे। प्रांतीय सरकारों के पास वित्तिय स्वायत्ता नहीं होती थी। 1870 में लार्ड मेयो ने प्रांतीय प्रशासन को चलाने के लिये उनकी जरूरतों को पूरा करने को सुनिश्चित किया।

1909 में भारत परिषद अधिनियम के लागू होने के पश्चात प्रांतीय सरकारों के राजनीतिक संस्थाओं के क्षेत्रों को विस्तृत किया गया। इस अधिनियम को पहली बार लागू किया गया जिसका उद्देश्य 'प्रतिनिधित्व' प्रणाली ब्रिटिश शासन में लागू करना था। इसमें गैर सरकारी चुने हुए सदस्य शामिल थे। इस अधिनियम के द्वारा मुस्लिम समुदाय को भी अलग से प्रतिनिधित्व दिया गया। 1919 के भारत सरकार अधिनियम ने प्रांतीय सरकारों को कुछ सत्ता सुपुर्द की। जिसमें केन्द्र सरकार का नियंत्रण उन का प्रमुख था। इसने केन्द्र सरकार के नियंत्रण को कुछ कम किया। इसके द्वारा प्रशासन के कार्यक्षेत्र और राजस्व के स्रोतों

का केन्द्र एवं प्रांतों में विभाजन किया। इस व्यवस्था के अंतर्गत प्रांतीय सरकारों को राजस्व के स्रोतों पर नियंत्रण का अधिकार दिया जैसे भूमि, सिंचाई और न्यायिक मामले। प्रांतीय विषयों को स्थानांतरित एवं आरक्षित श्रेणी में बाँटा गया। स्थानांतरित विषयों पर कानून बनाने का अधिकार राज्यपाल को था जबकि आरक्षित विषयों पर कानून बनाने का अधिकार विधायिका के पास था। राज्यपाल (कार्यकारी प्रमुख) विधायिका के प्रति उत्तरदायी नहीं था।

भारत सरकार अधिनियम 1935, अन्य भारत सरकार अधिनियमों से भिन्न था। जैसा कि आपने पढ़ा होगा उन अधिनियमों में ब्रिटिश इंडिया के प्रांत की सरकार एकात्मक या केन्द्रिकृत थी। अर्थात हर स्तर पर वही सरकार कार्यरत थी। पिछले अधिनियमों के बजाय भारत सरकार अधिनियम 1935 प्रांतीय स्वायत्ता की बात करता है। इसके द्वारा अल्पसंख्यकों को संरक्षण प्रदान किया गया। इन संरक्षणों में अल्पसंख्यकों जैसे मुस्लिम, सिख, पारसी, यूरोपियन एवं ऐंग्लों इंडियन समुदाय को पृथक प्रतिनिधित्व के प्रावधान दिये गये।

इस अधिनियम के द्वारा संघ एवं प्रांतों के बीच तीन सूचियों के तहत् सत्ता के बंटबारे का प्रावधान किया गया। प्रथम संघ सूची, द्वितीय समवर्ती सूची तथा तृतीय प्रांतीय सूची। इस अधिनियम के माध्यम से संघ एवं प्रांतों के बीच विवादों को सुलझाने के लिए संघीय न्यायालय का भी प्रावधान किया गया। प्रांतीय सरकार का कार्यकारी अध्यक्ष राज्यपाल था जिन्हें विशेष शक्तियां प्राप्त थी।

विशेष शक्तियों के तहत् राज्यपाल प्रांतीय विधायिका के निर्णयों पर वीटो का प्रयोग कर सकते थे। वे राज शाही की तरफ से कार्य करते थे और वे गवर्नर–जनरल के अधीन नहीं थे। गवर्नर–जनरल वायसराय को कहते थे। उन्हें कुछ व्यक्तिगत मामलों मे भी कुछ विशेषधिकार प्राप्त था। इन मामलों में उन्हें मंत्रियों की सलाह की जरूरत नहीं थी। राज्यपाल को गवर्नर–जनरल के नियंत्रण में कार्य करना पड़ता था और गवर्नर–जनरल वास्तव में राज्य का सचिव होता था। वे विधायिका के प्रति उत्तरदायी नहीं थे लेकिन उन्हें मंत्रियों की सलाह पर कार्य करना पड़ता था जो कि विधायिका के प्रति उत्तरदायी थे।

भारत सरकार अधिनियम 1935, में केन्द्र सरकार के गठन का प्रावधान भी था जिसमें राज्य एवं प्रांतों के प्रतिनिधि आते थे। इस प्रकार की सरकार को संघ सरकार कहते थे क्योंकि इसमें राज्य एवं प्रांत दोनों के सदस्य होते थे। लेकिन संघ सरकार की स्थापना नहीं हो सकी क्योंकि राजाओं के बीच संघ में शामिल होने पर सहमति नहीं थी। इस प्रकार इस अधिनियम के अंतर्गत केवल प्रांतीय सरकारों का गठन किया गया और इस अधिनियम के अंतर्गत प्रांतीय विधायिका के चुनाव 1937 में हुए। चुनाव के बाद आठ प्रांतों में कांग्रेस की सरकार बनी। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1937 में त्यागपत्र दे दिया। इस तरह एम. गोविन्द राव और निर्विचार सिंह के अनुसार भारत सरकार अधिनियम 1935 ने संविधान सभा के लिए संविधान निर्माण की आधारशिला रखी।

1.2.2 नेहरू रिपोर्ट : संविधान के मसौदे का प्रथम भारतीय प्रयास

जैसा कि आपने पढ़ा होगा संविधान निर्माण में ब्रिटिश शासन के द्वारा विभिन्न अधिनियमों को शामिल करने का प्रयास किया गया। भारतीयों को इसमें कोई भूमिका नहीं थी। भारतीयों के द्वारा संविधान तैयार करने का प्रथम प्रयास 1928 में नेहरु रिपोर्ट में किया गया। इसके पूर्व 1921–22 में असहयोग आंदोलन के दौरान भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं के द्वारा स्वराज के रूप में प्रयास किया गया।

नेहरु रिपोर्ट, मोतीलाल नेहरु के नाम पर तैयार की गयी जो मसविदा समिति के अध्यक्ष थे। मसविदा समिति का निर्णय अखिल भारतीय राजनीतिक दलों के सम्मेलन में लिया गया था। उन राजनीतिक दलों में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, स्वराज पार्टी और मुस्लिम लीग शामिल थी। मद्रास की जस्टिस पार्टी और पंजाब की यूनियनिस्ट पार्टी इसमें सम्मिलित नहीं थी। नेहरु रिपोर्ट ने सार्वभौमिक मताधिकार और केन्द्र एवं प्रांतों में जिम्मेदार सरकार की मांग की। इसने हालांकि प्रभुत्व शासन की माँग की न कि भारत को पूर्ण आजादी की। अर्थात् भारतीयों को केवल कुछ मामलों में कानून बनाने की आजादी थी ब्रिटिश सरकार के नियंत्रण में। इसके लिये नेहरु रिपोर्ट ने केन्द्र एवं प्रांतों के विषय की एक सूची तैयार की तथा मौलिक अधिकारों की सूची तैयार की। इसने पुरुष एवं महिलाओं के लिये सार्वभौमिक मताधिकार की माँग की। 1934 में, नेहरु रिपोर्ट के तैयार हो जाने के कुछ वर्षो के पश्चात् भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने आधिकारिक रुप से भारत के लोगों के लिए एक संविधान की माँग की वो भी बिना किसी बाहरी लोगों के हस्तक्षेप के।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) भारत के संविधान को अपनाने एवं लागू करने में क्या अंतर है?

....

....

....

....

2) भारत के संविधान को कब अपनाया गया तथा इसे कब लागू किया गया?

....

....

....

....

....

3) भारत सरकार अधिनियम 1935, अन्य पूर्व अधिनियमों से किस प्रकार भिन्न था?

....

....

....

....

4) नेहरु रिपोर्ट ने क्या सिफारिश की थी?

....

....

....

....

1.3 संविधान सभा का गठन

1.3.1 क्रिप्स मिशन

प्रारंभ में औपनिवेशिक शासकों ने भारत के संविधान निर्माण की माँग को ठुकरा दिया था। लेकिन बदली हुई परिस्थितियों, द्वितीय विश्व युद्ध की आहट और ब्रिटेन में नई सरकार के गठन ने भारत में ब्रिटिश सरकार को नये संविधान निर्माण को मजबूर कर दिया। 1942 में ब्रिटिश सरकार ने अपना केबिनेट सदस्य सर स्टेफोर्ड क्रिप्स को भारत भेजा। वे एक ड्राफ्ट प्रस्ताव लेकर आये थे जिसमें भारत के संविधान के गठन की बात थी। यह प्रस्ताव द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के पश्चात् लागू किया जाना था। लेकिन इसके लिये मुस्लिम लीग एवं कांग्रेस दोनों की सहमति आवश्यक थी। क्रिप्स मिशन के ड्राफ्ट प्रस्ताव में निम्न सिफारिशें थी – (1) भारत को प्रभुत्व (डोमिनियन) का दर्जा प्रदान करना (2) सभी प्रांत एवं राज्यों को मिलाकर भारतीय संघ का गठन करना (3) निर्वाचित संविधान सभा के द्वारा भारत के संविधान की रचना करना लेकिन जो प्रांत संविधान को स्वीकार करने को तैयार नहीं थे उन्हें अपनी वास्तविक स्थिति बरकरार रखने की छूट थी। इन प्रांतों को अलग संविधानिक प्रबंधों को अपनाने की छूट थी।

भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने ही क्रिप्स मिशन के प्रस्ताव को मानने से इनकार कर दिया। मुस्लिम लीग ने भारत को सांप्रदायिक आधार पर बाँटने की माँग की जिसमें उसने कुछ प्रांतों को स्वतंत्र पाकिस्तान राज्य बनाने की माँग की। उनकी माँगें थी कि भारत और पाकिस्तान दोनों के लिए दो अलग–अलग संविधान सभा होनी चाहिए।

1.3.2 केबिनेट मिशन

ब्रिटिश शासन ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग के बीच मतभेदों को दूर करने के कई प्रयास किये। लेकिन वह असफल रही। ब्रिटिश सरकार ने केबिनेट सदस्यों को दूसरा प्रतिनिधित्व भेजा जिसे केबिनेट प्रतिनिधित्वि कहा गया तथा बाद में वह कैबिनेट मिशन योजना के रुप में सामने आया जिसमें तीन कैबिनेट मंत्री शामिल थे – (1) लॉर्ड पौथिक लारेंस, (2) सर स्टैफोर्ड क्रिप्स एवं (3) ए. वी. अलैक्जैण्डर। कैबिनेट मिशन भी कांग्रेस और मुस्लिम लीग को एक समझौते पर लाने में असफल रही। लेकिन इसने अपना एक प्रस्ताव तैयार किया जिसे 16 मई 1946 को इंग्लैण्ड और भारत में समान तौर पर घोषित किया। कैबिनेट प्रतिनिधित्व ने निम्न सिफारिशें की – ब्रिटिश इंडिया और राज्यों को मिलाकर एक भारत संघ होना चाहिए। इसके पास रक्षा, विदेश मामले एवं संचार के विषयों पर कानून बनाने का अधिकार हो। बाकी अवशिष्ट अधिकार प्रांतों एवं राज्यों के पास होना चाहिए। संघ के पास कार्य प्रक्रिया एवं विधायिका होनी चाहिये। इसमें प्रांत एवं राज्यों के प्रतिनिधि होने चाहिये लेकिन अहम सांप्रदायिक मुद्दों पर विधायिका को निर्णय लेने का अधिकार है। इसमें उपस्थित सदस्यों के मत द्वारा बहुमत के आधार पर फैसला किया जाता है। प्रांतों को कार्यपालिका एवं विधायिका के साथ समूह बनाने की छूट थी। सभी समूह प्रांतों के विषयों को निर्धारित करने को आजाद है जो किसी समूह संगठन द्वारा उठाये गये हो।

1.3.3 संविधान सभा का चुनाव

केबिनेट मिशन के प्रस्ताव के अनुसार संविधान सभा के चुनाव कराये गये जिसमें कांग्रेस और मुस्लिम लीग के सदस्यों को वापस लिया गया। संविधान सभा के सदस्यों का चुनाव

प्रांतीय विधायी सभा द्वारा किया गया। कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग के बीच केबिनेट मिशन के समूह खंड के उपर विवाद दिखाई दिये। ब्रिटिश सरकार ने इसमें दखल देकर स्थिति स्पष्ट की और बताया कि मुस्लिम लीग के तर्क सही थे। 6 दिसंबर, 1946 को ब्रिटिश सरकार ने एक विवरण प्रकाशित किया जिसमें दो विधान क्षेत्र एवं दो राज्यों की संभावना को उजागर किया। इसके परिणामस्वरुप, संविधान सभा की प्रथम बैठक जो 9 दिसंबर 1946 को बुलाई गयी उसका मुस्लिम लीग ने बहिस्कार किया और इसने मुस्लिम लीग की उपस्थिती के बिना कार्य किया।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) क्रिप्स मिशन की सिफारिशें क्या थीं?

....

....

....

....

2) केबिनेट मिशन की सिफारिशें कौन–कौन सी थी?

....

....

....

....

....

1.4 संविधान सभा के प्रतिनिधित्व की प्रकृति

प्रायः यह दलील दी जाती है कि संविधान सभा के अंतर्गत भारत के आम नागरिकों का प्रतिनिधित्व नहीं था। क्योंकि इसके प्रतिनिधि सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार से निर्वाचित नहीं हुए थे। बल्कि वे अप्रत्यक्ष रूप से समाज के विशिष्ट वर्गों द्वारा प्रतिबंधित निर्वाचन प्रक्रिया से चुने गये थे। ये विशिष्ट वर्ग शिक्षित और आयकर अदा करने वाले थे। ग्रेनविल ऑस्टिन के अनुसार इसका प्रमुख कारण कैबिनेट मिशन योजना की रणनीति थी ताकि संविधान निर्माण की प्रक्रिया की गति को धीमा होने से बचाया जा सके। कैबिनेट मिशन ने संविधान सभा में अप्रत्यक्ष चुनाव का प्रावधान किया। इसका चुनाव प्रांतीय विधायिका के सदस्यों द्वारा किया गया। कांग्रेस ने इस प्रस्ताव को मान लिया ताकि संविधान सभा के चुनाव वयस्क मताधिकार से हो सके। प्रतिबंधित वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित होने के बावजूद संविधान सभा के अंतर्गत सभी धर्मों एवं वर्गों की राय को संविधान सभा में प्रतिनिधित्व मिला। ऑस्टिन ने यह दावा किया कि संविधान सभा में यद्यपि कांग्रेस का बहुमत था फिर भी यह विश्वास था कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को सामाजिक एवं वैचारिक स्तर पर विविधताओं का प्रतिनिधित्व करना चाहिये। उनकी यह भी नीति थी कि संविधान सभा में विभिन्न अल्पसंख्यक समुदाय के दृष्टिकोण को महत्व दिया जाये। संविधान सभा में विभिन्न विचारधाराओं के सदस्य थे तथा तीन धार्मिक समुदाय के सदस्य भी थे उनमें सिख, मुस्लिम, हिन्दु एवं पारसी इत्यादि थे। के. सान्ताराम के शब्दों में कोई ऐसी

विचारधारा नहीं थी जिसका कि विधानसभा में प्रतिनिधित्व न हो (देखें ऑस्टेन, 2012, पेज नं. 13, फुट नोट 48)। संविधान सभा के ज्यादातर सदस्य भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य थे। इनमें एक दर्जन से अधिक गैर कांग्रेसी सदस्य भी शामिल थे। उनमें से कुछ इस प्रकार हैंः– ए. के. अय्यर, एच. एन. कुन्जरु, एन. जी. आयंगर, एस. पी. मुखर्जी, और डा. बी. आर. अम्बेडकर। एस. पी. मुखर्जी हिन्दू महासभा के प्रतिनिधि थे। संविधान सभा में देशी राज्यों के प्रतिनिधी भी शामिल थे। यहाँ पर यह समझने की जरूरत है कि डा. अंबेडकर पहली बार बंगाल से अनुसूचित जाति संघ से संविधान सभा में चुनकर आये थे। लेकिन वे बंगाल के विभाजन के कारण इस सीट से चुनाव हार गये और वे फिर से बंबई नेशनल कांग्रेस से चुने गये। वे कांग्रेस हाई कमान के निवेदन के पश्चात् चुनकर आये थे। संविधान सभा को सभी व्यक्तियों का ध्यान रखना था चाहे वे किसी भी सामाजिक और सांस्कृतिक जुड़ाव से क्यों न हो। संविधान में किसी भी प्रावधान को शामिल करने हेतु संविधान सभा में काफी विचार–विमर्श हुआ। इस प्रकार संविधान सभा के सदस्य अपनी कमजोरियों को दूर कर सकते थे क्योंकि वे प्रतिबंधित मताधिकार से चुनकर आये थे। आप इकाई संख्या तीन में संविधान की प्रस्तावना के बारे में पढ़ेंगे, संविधान सभा ने संविधान में लोकतांत्रिक मूल्यों को शामिल करने का प्रयास किया। संविधान सभा ने हमारे संविधान में विश्व के विभिन्न संविधानों से कई प्रकार के प्रावधान अपनाने की कोशिश की। ऑस्टिन का तर्क था कि संविधान सभा ने अन्य देशों से लिये गये प्रावधानों को भारत के संदर्भ में अपनाने की कोशिश की।

संविधान सभा के ज्यादातर सदस्यों ने इसकी कार्यवाही में हिस्सा लिया। लेकिन इनमें से 20 ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने इसमे अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनमें से कुछ व्यक्ति इस प्रकार है :– राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना आजाद, वल्लभ भाई पटेल, जवाहर लाल नेहरू, गोविन्द वल्लभ पंत, पी. सीता रमैया, ए. के. अयर, एन. जी. आयंगर, के. एम. मुन्शी, डा. बी. आर. अम्बेडकर और सत्यनारायण सिन्हा। हालांकि संविधान सभा ही एक ऐसा मंच था जिसमें सारी कार्यवाही हुई एवं वार्तालाप हुआ लेकिन इसके अलावा तीन अन्य निकाय थी जिसमें भी विचार–विमर्श हुआ। ये तीन निकाय थे, संविधान सभा, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तथा अंतरिम सरकार। संविधान सभा के कुछ सदस्य अन्य निकायों के भी सदस्य थे। ऑस्टिन का मानना था कि संविधान में चार ऐसे लोग थे जिनका पूरी सभा में आधिपत्य था तथा वे सभा में सबसे सम्मानीय एवं इज्जतदार लोग थे। ये चार व्यक्ति थे – नेहरू, पटेल, प्रसाद एवं आजाद। उनकी संविधान सभा की कार्यवाही में अहम भूमिका थी। इनमें कुछ सरकार, कांग्रेस पार्टी एवं संविधान सभा में थे। प्रसाद संविधान सभा के अध्यक्ष बनने से पूर्व कांग्रेस पार्टी के भी अध्यक्ष थे। जबकि पटेल एवं नेहरू दोनों ही प्रधानमंत्री और उप प्रधानमंत्री थे। वे संविधान सभा की आंतरिक समिति के हिस्सा थे। संविधान सभा की एक प्रारूप समिति थी जिसने संविधान के प्रारूप को तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। डा. बी. आर. अंबेडकर प्रारूप समिती के अध्यक्ष थे और उन्होंने संविधान के प्रारूप को तैयार करने में अग्रणी भूमिका अदा की। डा. अंबेडकर के इस कार्य की सराहना करने हुए टी. टी. कृष्णामचारी जो इस समिती के सदस्य थे उन्होंने एक भाषण के दौरान ये बातें कही :–

''आप सभी को शायद मालूम होगा कि सदन ने सात सदस्यों को मनोन्नति किया जिसमें से एक सदस्य ने इस्तीफा दे दिया। एक सदस्य की मृत्यु हो गयी। एक सदस्य अमेरिका में थे तथा एक और अन्य सदस्य राज्य के कार्यों में व्यस्त थे। एक या दो व्यक्ति दिल्ली से काफी दूर थे तथा उनका स्वास्थ्य भी उन्हें बैठक में आने से रोक रहा था। आखिरकार संविधान के प्रारूप को तैयार करने का भार डा. अंबेडकर के कंधों पर आ गया। और मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि उन्होंने इस कार्य को बखूबी पूरा किया जो कि सराहनीय है।''

(देखें अम्बेडकर संकलित कार्य, वो. 13)। डा. अंबेडकर ने अपनी तरफ से इसका श्रेय एस. एन. मुकर्जी, बी.एन. राव और उनके असिसटेंट को दिया जो प्रारुप समिति के अफसर थे। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार मुकर्जी ने संविधान को अच्छे शब्दों में व्यक्त किया था (अस्टिन 2012, पृ.20 फुटनोट 70)।

1.5 संविधान निर्माण में संविधान सभा की भूमिका 1946–1949

संविधान सभा के गठन का उद्घाटन सत्र 9 दिंसबर, 1946 को आयोजित किया गया। इसमें सभी 296 सदस्यों को भाग लेना था लेकिन इनमें से मात्र 207 सदस्यों ने ही हिस्सा लिया क्योंकि मुस्लिम लीग के सदस्यों ने इसका बहिष्कार किया था। जैसा पहले भी बताया जा चुका है उन्होंने संविधान सभा का बहिस्कार किया था। इस सभा में आचार्य कृपलानी ने डा. सच्चिदानंद सिन्हा से निवेदन किया कि वे इसके अस्थायी अध्यक्ष बन जाए। बाद में सभी सदस्यों ने एक प्रस्ताव पास किया 10 दिसंबर 1946 को स्थायी अध्यक्ष के चुनाव के लिए। उसके अगले दिन यानि 11 दिसंबर 1946 को डा. राजेन्द्र प्रसाद को संविधान सभा का स्थायी अध्यक्ष चुन लिया गया। 13 दिसंबर 1946 को जवाहर लाल नेहरू ने एक प्रस्ताव पेश किया जिसमें इसके लक्ष्य एवं उद्देश्य शामिल थे। इसकी चर्चा इकाई संख्या 3 में की गई हैं।

सुचारू रूप से कार्य करने के लिये संविधान सभा ने इसके कार्यों को विभिन्न समितियों में विभाजित किया। उनमें से कुछ महत्वपूर्ण समितियां इस प्रकार थी। (1) केन्द्रिय सत्ता समिति। इसके अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू थे तथा इसमें नौ अन्य सदस्य थे। (2) मौलिक अधिकार और अल्पसंख्यक समिति। इसमें 54 सदस्य थे और सरदार बल्लभ भाई पटेल इसके अध्यक्ष थे। (3) संचालन समिति, इसके तीन सदस्य थे के. एम. मुन्शी, गोपाल स्वामी अंयगर और भगवान दास, इसके अध्यक्ष डा. के. एम. मुंशी थे। (4) प्रांतीय संविधान समिति, इसमें 25 सदस्य थे और सरदार पटेल इसके अध्यक्ष थे। (5) संघीय संविधान समिति इसमें 15 सदस्य थे और इसके अध्यक्ष जवाहर लाल नेहरू थे।

इन समितियों की रिपोर्ट पर चर्चा करने के पश्चात् संविधान सभा ने 29 अगस्त 1947 को एक प्रारूप समिति का गठन किया। इस समिति का अध्यक्ष डा. अंबेडकर को बनाया गया। डाफ्ट (प्रारूप) को सर बी. एन. राव ने तैयार किया जो संविधान सभा के सलाहकार थे। प्रारूप को समझने के लिए एवं उसका परीक्षण करने के लिये 7 सदस्यीय समिति का गठन किया गया। डा. अंबेडकर जो उस समय कानून मंत्री भी थे और इस समिति के अध्यक्ष भी थे उन्होंने इस प्रारूप को संविधान सभा में पेश किया। डा. अंबेडकर ने 'भारतीय संविधान के प्रारूप' को प्रस्तुत किया। संविधान के प्रारूप का फरवरी 1948 में प्रकाशन हुआ। संविधान सभा ने इस प्रारूप को कई सत्रों में चर्चा की और यह अक्तूबर 17, 1949 को पूरा हुआ। इस चर्चा को हम द्वितीय पाठन भी कहते है। संविधान सभा फिर से 14 नवंबर 1949 को मिली और प्रारूप पर चर्चा की। इसे तृतीय पाठन कहते हैं। 26 नवंबर 1949 को इसको अंतिम रूप प्रदान किया गया तथा संविधान सभा के अध्यक्ष के पास हस्ताक्षर के लिए भेज दिया गया। इस प्रकार 26 नवंबर 1949 को संविधान को अपनाया गया तथा ठीक दो महीने पश्चात् 26 जनवरी 1950 को इसे लागू किया गया।

1.6 संविधान की प्रमुख विशेषताएं

भारतीय संविधान की कुछ प्रमुख विशेषताऐं है। ये विशेषताऐं ही भारतीय संविधान को एक मुख्य पहचान प्रदान करती है। भारत का संविधान विश्व के विभिन्न संविधानों की

विशेषताओं पर आधारित है। डा. अंबेडकर के अनुसार ''विश्व के प्रसिद्ध संविधानों को टटोलने के पश्चात् ही इसे तैयार किया गया। मौलिक अधिकारों (इकाई) 4 का अध्याय अमेरिकी संविधान से लिया गया है। संसदीय प्रणाली ब्रिटिश संविधान से अपनायी गयी है, राज्य के नीति निर्देशक तत्व (इकाई 5) आयरलैण्ड के संविधान से लिये गये हैं। आपातकालीन प्रावधान (इकाई 11) वैमार (जर्मन) संविधान तथा भारत सरकार अधिनियम 1935 से ग्रहण किये गये हैं। ये सभी विशेषताऐं जो अन्य संविधानों से ली गयी थी उन्हें देश की जरूरतों के हिसाब से परिवर्तित किया गया है। यह सबसे लंबा लिखित संविधान है। इसके गठन के समय इसमें 395 अनुच्छेद एवं आठ अनूसुचियां थी। यह अधिकारों के सुरक्षित प्रदान करने की बात करता है। इसमें मौलिक अधिकार एवं राज्य के नीति निर्देशक सिंद्धात शामिल है। संविधान निर्माताओं ने पृथक निर्वाचक के बजाय सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार को प्राथमिकता दी।

1.6.1 सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार एवं पृथक निर्वाचक की समाप्ति

मौलिक अधिकारों को शामिल करने के लिए बनी उप–समिति में बहस करने के पश्चात् इन्हें संविधान में शामिल करने की सिफारिश नहीं की। बल्कि समिति ने संविधान के भाग तीन में रखने पर आपत्ति जताई और कहा कि इन्हें संविधान के किसी दूसरे स्थान में जगह दी जानी चाहिये। ऐसी ही एक उदाहरण है सार्वभौमिक मताधिकार और गुप्त एवं समय बद्ध चुनाव। उप समिति सार्वभौमिक मताधिकार के पक्ष में थी लेकिन उसने सुझाव दिया कि इन्हें मौलिक अधिकारों का भाग नहीं बनाया जाना चाहिये। इस प्रकार इन्हें संविधान के भाग 15 के अंतर्गत अनुच्छेद 326 में रखा गया। हालांकि अनुच्छेद 326 से ''सार्वभौम'' शब्द गायब है। लेकिन यह सत्य है कि देश के सभी वयस्क नागरिक जिन्हें वोट देने का अधिकार है वह एक प्रकार से ''सार्वभौमिक'' वयस्क मताधिकार माना जाता है। भारतवासियों को वयस्क मताधिकार मिलने से पहले स्वतंत्रता आंदोलन के वरिष्ठ नेताओं ने पृथ निर्वाचक की समाप्ति के लिये आंदोलन किया। ब्रिटिश सरकार ने भारत में 1909 के मार्ले मिन्टो सुधार से लेकर 1932 के 'कम्युनल अवार्ड' तक पृथक निर्वाचक प्रक्रिया को जारी रखा। 'कम्युनल अवार्ड' का मुख्य उद्देश्य था मुस्लिम, सिख, ईसाई, यूरोपियन और ऐंग्लों इंडियन्स को पृथक निर्वाचक घोषित करना । इसने पिछड़े वर्गों को भी सीटें प्रदान की जिन्हें चुनाव में विशेष क्षेत्रों में पूरा किया जाना था। इन चुनाव क्षेत्रों में केवल पिछड़ें वर्गों को ही मताधिकार प्राप्त था। इसके साथ पिछड़ें वर्गों को सामान्य सीटों पर भी वोट देने को अधिकार प्राप्त था। गाँधी जी ने इस प्रकार की सिफारिशों का कड़ा विरोध किया। इनके विरोध में वे 1932 में आमरण अनशन पर बैठ गये। गाँधीजी के भूख हड़ताल पर बैठने का डा. अंबेडकर ने विरोध किया। इसके बाद गाँधी और अंबेडकर दोनों के बीच पूना समझौता हुआ। पूना पैक्ट के अनुसार पिछड़े वर्गों को सामान्य सीटों में सीटें आरक्षित कर दी गयी।

अभ्यास प्रश्न 3

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) संविधान सभा के गठन में सामाजिक विविधताऐं किस प्रकार से परिवर्तित हुई?

....

....

....

2) संविधान सभा के अंतर्गत ऑस्टिन ने किनको ''अधिनायक'' कहकर पुकारा था?

....

....

....

....

....

....

3) संविधान सभा के अंतर्गत कौन–कौन सी समितियाँ थीं? कुछ समितियों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

1.7 सारांश

संविधान निर्माण के मुख्यतौर पर दो चरण थे। प्रथम 1857 से 1935 तथा दूसरा 1946 से 1949. ब्रिटिश राजशाही को सत्ता मिलने के पश्चात् ब्रिटिश सरकार के शासन के विभिन्न अधिनियम लागू किये। इनमें भारतीयों को भी विभिन्न शासन के संस्थानों के प्रतिनिधित्व दिया गया। इसका मूल मकसद था अपनी उपनिवेश हितों को पूरा करना न कि लोकतांत्रिक अधिकारों को प्रदान करना। मार्ले–मिंटो सुधार 1909 एवं 1932 के कम्युनल अवार्ड के माध्यम से कम्युनल प्रतिनिधित्व को लागू किया जिसका स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं ने विरोध किया। गाँधीजी की भूख हड़ताल के बाद पूना समझौता हुआ जिसमें पृथक निर्वाचक प्रणाली को समाप्त किया गया तथा प्रांतीय विधानमंडल में पिछड़ें वर्गों को आरक्षण दिया गया। बदली हुई परिस्थितियों और कांग्रेस की माँग के कारण संविधान निर्माण की प्रक्रिया तेज हुई। ब्रिटिश सरकार ने अंततः भारतीयों के लिए एक संविधान सभा का गठन किया। संविधान सभा में केबिनेट मिशन की सिफारिशों के पश्चात् प्रांतीय विधानमंडल से चुनाव करवाये गये। समाज के विशिष्ट वर्गों के निर्वाचन के बावजूद संविधान सभा में विभिन्न विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व था। इसमें विभिन्न सामाजिक समूहों का भी प्रतिनिधित्व था। संविधान सभा ने सभी मुद्दों पर गहराई से विचार–विमर्श किया उसके पश्चात् ही किसी खास निष्कर्ष पर पहुँची। संविधान सभा में विभिन्न उप–समितियों के सुझाव एवं निर्णय को अंततः संविधान में शामिल कर लिया गया। भारत का संविधान एक ऐसा दस्तावेज है जो एक सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि को प्रचलित करता है। संविधान के कुछ महत्वपूर्ण सिद्धांत है जैसे उदार लोकतंत्र ; धर्म–निरपेक्षता एवं सामाजिक लोकतंत्र के कुछ तत्व। यह व्यक्तियों एवं समुदायों को उनके सांस्कृतिक, भाषायी, तथा धार्मिक अधिकारों की रक्षा की को सुनिश्चित करता हैं।

1.8 उपयोगी संदर्भ

अंबेडकर, डा. बी. आर., (1994), भाषण एवं लेखन, खंड, 13, शिक्षा विभाग महाराष्ट्र सरकार।

ऑस्टिन ग्रेनविल (2009), भारतीय संविधान : राष्ट्र की आधारशिला : कार्नर स्टोन ऑफ ए नेशन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

बसु, डी. डी. (1960), भारत के संविधान का परिचय।

चौबे, एस. के. (2009), भारतीय संविधान का निर्माण एवं कार्यप्रणाली, नई दिल्ली, नेशनल बुक ट्रस्ट।

मिश्रा, सलिल, (2001), सांप्रदायिक राजनीति का वर्णन : उत्तर प्रदेश, 1937–39, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

राव, एम. गोविन्द और सिंह निरविकार, (2005), भारत में संघवाद का राजनीति अर्थशास्त्र, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

सरकार, सुमित, (1983), आधुनिक भारत 1885–1947, नई दिल्ली, मैक्मिलन।

शंकर, वी. एल. और रोड्रिग्स बेलेरियन (2011), भारतीय संसद : जनतंत्र का कार्य, नई दिल्ली, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 के उत्तर

1) संविधान को अपनाना का आशय है संविधान को स्वीकार करना। संविधान सभा द्वारा इसकी संरचना का कार्य पूरा होने पर स्वीकार किया गया। संविधान को लागू करने का अर्थ है, इसका प्रथम बार आधिकारिक तौर पर क्रियांवयन करना।

2) संविधान पहली बार 26 नवंबर 1949 को अपनाया गया तथा 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ।

3) अन्य अधिनियमों के विपरीत, भारत सरकार अधिनियम 1935 ने प्रांतीय स्वायत्तता प्रदान की। इसने तीन सूचियों द्वारा संघ एवं प्रांतों के बीच सता का विभाजन किया, इस अधिनियम के एक संघीय न्यायालय की भी स्थापना की ताकि सभी विवादों को सुलझाया जा सके।

4) नेहरू रिपोर्ट ने संविधान की रचना का पहली बार प्रयास किया इसने वयस्क मताधिकार की माँग की तथा केन्द्र एवं प्रांतों में जिम्मेदार सरकार की माँग की। इसने केन्द्र एवं प्रांतों के विषयों की सूची तैयार की तथा मौलिक अधिकारों की सूची भी बनाई इसने पुरूष एवं महिलाओं के किये वयस्क मताधिकार की माँग को उठाया। लेकिन इसने पूर्ण आजादी की बजाय प्रभुत्व राज्य की माँग की।

अभ्यास प्रश्न 2 के उत्तर

1) इसकी सिफारिशों में संविधान के निर्माण का मसविदा शामिल था, यदि मुस्लिम लीग और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस दोनों को यह स्वीकार हो। इनमें भारत को डोमिनियन राजय का दर्जा देना, भारतीय संघ का गठन जिसमें सभी प्रांत शामिल हो एवं ब्रिटिश

संविधान के अंतर्गत आने वाले भारतीय राज्य भी शामिल हो। संविधान सभा द्वारा भारत के संविधान का निर्माण करना, संविधान सभा के सदस्यों का चुनाव भारत के प्रांतों में से किया जाने का प्रस्ताव शामिल था।

2) इसकी सिफारिशों में शामिल था – भारतीय संघ का गठन करना जिसमें ब्रिटिश भारत के प्रांत शामिल हो एवं वे राज्य जिनका विदेशी मामलों के विषयों में अधिकार हो, रक्षा एवं संचार प्रांत एवं राज्यों की शक्तियाँ प्रदान करना, तथा प्रांतों को स्वतंत्रता प्रदान करना ताकि वे कार्यपालिका एवं विधायिका में अपना समूह बनाना।

अभ्यास प्रश्न 3 के उत्तर

1) यद्यपि संविधान सभा के सदस्य अप्रत्यक्ष रूप से प्रांतिय विधान सभाओं से चुने गये जिनमें समाज के विशिष्ट वर्गों के सदस्य थे। इसमें विभिन्न विचारों के लोग शामिल थे क्योंकि काँग्रेस की कुछ ऐसी ही नीति थी। संविधान सभा में तीन धार्मिक समुदायों के लोग थे, विभिन्न विचारधाराओं के प्रतिनिधि एवं विभिन्न सामाजिक पृष्ठभूमि के सदस्य शामिल थे।

2) जिन चार व्यक्तियों को ऑस्टिन ने 'अधिनायक' कह कहा है, संविधान सभा में वे थे, जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना आजाद, और डा. राजेन्द्र प्रसाद।

3) संविधान सभा ने सुचारू रूप से कार्य करने के लिये कुछ समितियों का गठन कियां इनमें से कुछ महत्वपूर्ण समितियाँ इस प्रकार थी केन्द्रिय सत्ता समिति जिसके अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू थे। मौलिक अधिकारों एवं अल्पसंख्यकों की समिति, इसके अध्यक्ष सरदार पटेल थे। इसके अलावा प्रांतीय संविधान समिति एवं संघीय संविधान समिति भी थी।

THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 2 दार्शनिक आधार*

संरचना

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 वैचारिक एवं दार्शनिक पृष्ठभूमि
2.3 भारत का संविधान सभा का दर्शन
2.4 संविधान सभा और शैक्षिक बहस
2.5 सारांश
2.6 उपयोगी संदर्भ
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

भारत का संविधान लोगों के संपूर्ण कल्याण के लिए एक अलौकिक दस्तावेज है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये इसके प्रावधान है। इसकी दृष्टि कुछ दार्शनिक सिद्धांतों पर आधारित है। आप जैसा कि इकाई संख्या 3, 4, एवं 5 में पढ़ेंगे, भारत का संविधान एक ऐसा संविधान है जो भारत के लोगों के लिए तथा भारत को एक जनतांत्रिक गणराज्य की स्थापना करने का संकल्प लेता है। जहाँ सभी लोगों के अधिकारों की सुरक्षा का भी संकल्प है चाहे वो किसी भी जाति, नस्ल, लिंग, या जगह से संबंधित हो। ये सिद्धांत सभी व्यक्तियों को स्वायत्ता एवं सम्मान प्रदान करते हैं। सभी व्यक्ति अपने निर्णय लेने में सर्वोच्च हैं और वे लोकतांत्रिक प्रक्रिया के माध्यम से निर्णय ले सकते हैं। यह इकाई भारत के संविधान के दार्शनिक आधारों की चर्चा करेगी।

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप यह जान पायेंगे;

- भारतीय संविधान का दार्शनिक उन्मुखीकरण;
- संविधान सभा की वैचारिक रचना; एवं
- संविधान सभा के वैचारिक उन्मुखीकरण के कारक।

2.1 प्रस्तावना

जैसे आपने इकाई 1 में पढ़ा है भारत का संविधान, संविधान सभा में गम्भीर चर्चा का परिणाम है। इसको 26 नवम्बर 1949 को स्वीकार तथा 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया था। संविधान का मूल दार्शनिक आधार एक ऐसे सामाजिक परिवर्तन को दृष्टिकोण प्रदान करता है जिसमें राष्ट्र की संप्रभुता एवं अखण्डता सुनिश्चित हों। जैसे आप 3 तथा 4 इकाइयों में पढ़ेंगे संविधान के मूल दार्शनिक आधार की जड़ें भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के नेतृत्व के प्रयत्नों से जुड़ी हुई है। राष्ट्रीय आन्दोलन के समय भारत का कॉमन वेल्थ विधेयक 1925, नेहरू रिपोर्ट 1928 तथा सप्रू रिपोर्ट 1945 ने लोगों के प्रजातांत्रिक अधिकारों की सिफारिश की थी। ये प्रजातांत्रिक अधिकार थे; व्यक्ति की स्वतंत्रता, अंतरात्मा की स्वतंत्रता, विचारों की स्वतंत्रता, एकत्र होने की स्वतंत्रता, न्याय की समानता,

* प्रतिप चटर्जी, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, कल्याणी विश्वविद्यालय, नदिया, पश्चिम बंगाल

अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा, मौलिक अधिकारों को न्यायोचित बनाना। संविधान सभा की मौलिक अधिकारों तथा जनजातियों एवं सरकारी हस्तकक्षेप से बाहर रखे गए तथा क्षेत्रों (Excluded Areas) की समिति द्वारा भी इन मूल्यों की सिफारिश की गई थी। जवाहरलाल नेहरू द्वारा तैयार किए उद्देश्य संकल्प (Aims and Objectives Resolution) संविधान की प्रस्तावना का आधार बना। संविधान के मूल दर्शनों ने देश के भविष्य के संविधान के मुख्य उद्देश्यों की पहचान की। कार्यपालिका, न्यायपालिका, विधायिका संस्थाओं को भी दार्शनिक औपनिवेशिक काल से जोड़ा जा सकता है। संविधान के मूल आधार न केवल व्यक्तियों, समुदायों और राज्य के संबधों को वरन शासन एवं सरकार की विभिन्न इकाइयों के संबंधों में भी प्रदार्शित होते हैं। कार्यपालिका, विधायिका एवं न्यायपालिका के मध्य शक्तियों का प्रथक्करण (Separation of Power) तथा संघ, राज्यों एवं स्थानीय स्वाशासन संस्थाओं के मध्य शक्तियों का विभाजन (Division of Power) इसके उदाहरण है। पिछड़े वर्गों एवं पिछड़े क्षेत्रों के हितों की सुरक्षा के लिए संविधान के विशेष प्रावधान भी संविधान के दार्शनिक आधार द्वारा निर्मित किए गए हैं। संविधान सभा के नेताओं का यह मानना था कि भारतीय संविधान के मौलिक आधार और भारतीय परम्पराएं एक दूसरे से मेल खाती है। इन आधारों के कारण भारतीय संविधान भारत में प्रज्ञातंत्र के क्रियान्वयन का मार्गदर्शन कर सका है।

2.2 वैचारिक और दार्शनिक पृष्ठभूमि

संविधान सभा के सदस्यों में समाज के सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व था। इसके अंदर सभी बड़े राजनीतिक दलों के नेताओं को भी शामिल किया गया था। भारतीय संविधान के वैचारिक सिद्धांतों का आधार उनके सदस्यों की वैचारिक एवं दार्शनिक पृष्ठभूमि का होना था। संविधान सभा में विभिन्न वैचारिक और सामाजिक पृष्ठभूमि के सदस्य शामिल थे। ग्रेनविल ऑस्टिन ने अपनी किताब दॉ इन्डियन कांस्टीएयूशन : कार्नेस्टोन ऑफ ए नेशन (भारतीय संविधानः राष्ट्र की आधारशिला) में सभी सदस्यों का जीवन चरित्र प्रस्तुत किया है। इसमें उनकी दलिय संबंध, उनकी जाति एवं समुदाय का संबंध तथा उनके क्षेत्र का भी जिक्र है। यद्यपि उनके अंदर मतभेद थे फिर भी संविधान के प्रावधान उनके विचारों का संरलेषण है। ये विचार काफी गंभीर चर्चा के बाद उभर कर सामने आये थे। माधव खोसला ने अपनी पुस्तक इन्डियन कॉस्टीएयूशन (भारतीय संविधान (2012) में यह अवलोकन किया कि संविधान में ''बौद्धिक विविधता'' का समावेश एवं प्रतिनिधित्व था। यहां तक कि उनके भीतर मतभेद होने के बावजूद, संविधान सभा के सदस्य विचार–विमर्श करने के पश्चात् आम सहमति पर पहुँच थे। वास्तव में संविधान सभा ने किसी खास समुदाय के हितों की अनदेखी नहीं की थी। संविधान के सदस्यों के अंदर केन्द्रिय आकृति का भाव था।

ग्रेनविल ऑस्टिन के शब्दों में संविधान सभा के चार सदस्यों का संविधान सभा के अंदर आधिपत्य था। ये सदस्य थे, मौलाना आजाद, जवाहर लाल नेहरु, वल्लभ भाई पटेल और राजेन्द्र प्रसाद। उन्होंने संविधान सभा में अपनी अहम भूमिका निभाई थी। बी. एन. राव संविधान सभा के सदस्य नहीं थे फिर भी उन्होंने संविधान सभा सलाहकार की भूमिका निभाई थी। उन्हें पश्चिमी संविधानों की परंपरा का अभ्यास था। संविधान सभा ने गाँधीवादी विचारों को निरस्त कर दिया था। उन्होंने काँग्रेस को नये रूप में देखा और भारतीय राजनीतिक जीवन में पंचायतों को केन्द्र माना। गाँधीवादी और हिन्दू राष्ट्रवादी चाहते थे कि संविधान में हिन्दू धार्मिक मूल्यों को शामिल किया जाये। लेकिन ये निरस्त कर दिये गये। संविधान को संशोधित किया जा सकता है। लेकितन इसके मूल ढ़ांचे को नहीं बदला जा सकता है। कुल मिलाकर, संविधान में वैचारिक आधार इसके केन्द्र बिंदु है। लोकतांत्रिक मूल्य, व्यक्ति एवं समूह अधिकार, अधिकारों का संविधानिक गणना, सार्वभौम मताधिकार,

संसदीय लोकतंत्र शक्तियों का विभाजन, केन्द्र और राज्यों के बीच शक्तियों का बंटवारा संविधानिक अधिकारों जैसे समानता के अधिकार की गांरटी देना इत्यादि संविधान के अंतर्भाग है।

जैसा कि आप इकाई संख्या 3 में पढ़ेगे, संविधान सभा में कुल 15 समितियां थी जिसमें 80 से अधिक व्यक्तियों की सदस्यता भी शामिल थी। इन समितियों ने अपनी रिपोर्ट 1947 में अप्रैल और अगस्त में सौंप दी थी जिनपर संविधान सभा ने विचार किया। इन निर्णयों के आधार पर संविधान के अंतिम आकार एवं रूप डा. अंबेडकर ने दिया जो कि ड्राफ्टिंग कमेटी के अध्यक्ष थे। संविधान के मसौदे को संविधान सभा में पेश किया गया तथा इसे 4 नवंबर 1948 को चर्चा के लिए रखा गया। संविधान सभा ने 17 अक्टूबर 1949 के इस पर दुबारा अध्ययन किया। करीब 7635 संशोधन लागे गये जिनमें 2473 पर चर्चा की गयी। संविधान सभा ने अंत में 26 नवंबर 1949 को औपचारिक रूप से संविधान को मंजूरी दी तथा उसी दिन अध्यक्ष ने हस्ताक्षर करके इसे पारित करने की घोषणा की। 24 जनवरी 1950 को संविधान सभा का अंतिम सत्र बुलाया गया और डा. राजेन्द्र प्रसाद को भारत का प्रथम राष्ट्रपति चुना गया। संविधान 26 जनवरी, 1950 को औपचारिक रूप से लागू किया गया। भारतीय संविधान में जो संविधान सभा ने पारित किया उस समय उसमें, 395 अनुच्छेद एवं 8 अनुसूचियां थी।

संविधान निर्माताओं ने संविधान सभा को एक दूरदर्शी संस्था माना था। यह केवल प्रतिनिधि संस्था ही नहीं थी बल्कि इसमें उन लोगों का प्रिनिधित्व था जो भविष्य के विषय में सोचते थे। इसका कार्य केवल संविधान का निर्माण करना ही नहीं था बल्कि राजनीतिक एवं सामाजिक ढ़ाँचे के इतिहास पर प्रकाश डालना तथा नई सरकार के गठन को प्रयास करना था। जवाहर लाल नेहरु ने संविधान सभा के बारे में कहा कि इसने लोगों के दिमाग में एक मनोवैज्ञानिक क्रांति पैदा की थी। यह स्वतंत्रता आंदोलन के तमाम मुद्दों को नारों से बदलकर हकीकत में लाना था तथा यह संविधान की रचना की विधि और प्रक्रिया दोनों ही थी।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) भारतीय संविधान की दार्शनिक पृष्ठभूमि क्या थी?

....

....

....

....

....

2.3 भारत की संविधान सभा का दर्शन

दर्शन का अर्थ है दृष्टिकोण जो कि कार्यप्रणाली में प्रतिबिंबित हुआ था। भारत के संविधान के निर्माण का कार्य संविधान सभा को सौंपा गया था। संविधान सभा के अंदर राजनीतिक और कानूनी विद्वान मौजूद थे। ये सभी सदस्य अपनी व्यक्तिगत विचारधारा को संविधान निर्माण में सभा योजन करने को उत्सुक थे। इसलिए लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद,

समानता न्याय एवं स्वतंत्रता जैसे सिद्धांतों को भारतीय संविधान में जगह दी गयी और ये सभी सिद्धांत भारत के संविधान के अहम बिंदू माने गये थे जो संविधान सभा ने बनाये थे। जैसे आप इकाई 2 से 5 में पढ़ोगे, भारतीय संविधान की मुख्य विशेषताएं इसकी प्रस्तावना मूल अधिकारों एवं राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों में दिए गए है। संविधान के दार्शनिक आधार बनाने में संविधान सभा के अन्य सदस्यों के साथ–साथ जवाहरलाल नेहरू, डा. बी. आर. अम्बेडकर, बल्लभ भाई पटेल ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। ग्रेनविल ऑस्टिन ने अपनी पुस्तक ''भारतीय संविधान : राष्ट्र की आधारशिला (1976) में यह टिप्पणी की कि ''पटेल की रूचि देशी रियासतों में थी, लोक सेवाओं और ग्रह मंत्रालय के कार्य से थी, जबकि नेहरु की रूचि मूल अधिकार, अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा तथा संविधान के सामाजिक सुधार पहलू पर अधिक था'' । भारत की संविधान सभा के दार्शनिक आधार निम्न थे :–

क) संप्रभुता – जब संविधान निर्माताओं ने भारत की राजनीतिक भविष्य के बारे में सोचा तो उन्होंने सबसे ज्यादा भारत की संप्रभुता के बारे में सोचा था। भारत को संप्रभु बनाना उनके लिए महत्वपूर्ण था और सर्वोच्च शक्ति को उन्होंने लोगों में निहित की थी। केन्द्र एवं राज्यों के सभी अंग तथा कार्यप्रणाली केवल भारत के लोगों से ही शक्ति ग्रहण करते हैं।

ख) लोकतांत्रिक मूल्य – संविधान निर्माताओं ने इस सिद्धांत को भी बहुमूल्य माना था। क्योंकि लोकतंत्र या लोकतांत्रिक मूल्य देश को मजबूती प्रदान करते है तथा सभी लोगों की आवाज को समान महत्व देते हैं।

ग) आम सहमति से निर्णय लेना – ग्रेनविल ऑस्टिन के अनुसार आम सहमति की अवधारणा संविधान सभा में आम बात थी। नेतृत्व के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण है कि वह किसी नतीजे पर पहुँचने से पहले आम सहमति से निर्णय ले क्योंकि यह तार्किक एवं प्रभावी रास्ता माना जाता है किसी समझौते को अंतिम रूप देने के लिए। यह सिद्धांत भी भारतीय संविधान की रचना के लिये सबसे उपयुक्त था। सबके अधिक आम सहमति शायद संघीय प्रावधान एवं भाषायी प्रावधानों में देखने को मिली है।

घ) समायोजन का सिद्धांत – ग्रेनविल ऑस्टिन के अनुसार, संविधान निर्माण में भारत का मूल योगदान इसके समायोजन का सिद्धांत था। अर्थात् जाहिर तौर पर असंगत अवधारणाओं में सामंजस्य करने की क्षमता। इसने संघीय एवं एकल व्यवस्था के बीच सामंजस्य बैठाया, राष्ट्रमंडल एवं रिपब्लिक सरकारों की सदस्यता के बीच सामंजस्य तथा मजबूत केन्द्र सरकार के साथ–साथ पंचायती राज व्यवस्था के प्रावधानों के सामंजस्य की दुहाई देना।

ङ) चयन एवं परिवर्तन की कला – संविधान सभा केवल अनुकरणात्मक नहीं थी। विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं से लिये गये प्रावधानों को संविधान सभा ने भारतीय स्थिति के साथ अनुकूल बनाने के लिये प्रयास किये। चयन एवं परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण, ऑस्टिन के अनुसार संविधान में संशोधन की विधि था। इसने संविधान को लचीला बनाया तथा राज्यों के अधिकारों की भी रक्षा की थी। किसी अन्य देश में संशोधन की प्रक्रिया हमारे देश से अच्छी नहीं है क्योंकि यहाँ संघवाद और ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था दोनों संविधान का आधार स्वरूप है।

च) मूल अधिकार – विशेष–रूप से वल्लभ भाई के कारण मूल अधिकारों को संविधान में न्यायोचित बनाया गया है और ये अधिकार आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था में लोगों के जीवन का आधार माने जाते है। अधिकारों की वजह से ही सभी नागरिक स्वतंत्र रूप से विचरण कर सकते है।

छ) धर्मनिरपेक्ष राज्य – धर्मनिरपेक्षता का सिद्धांत वह सिद्धांत है जो कि भारत के नागरिकों के लिए पूर्ण रूप से अधिकारों का इस्तेमाल करने के लिये हैं। धर्म–निरपेक्षता के सिद्धांत को संविधान सभा में काँगेस के एक वर्ग ने स्थापत्य किया था, जिनका मानना था कि भारत को एक धर्म–निरपेक्ष राज्य होना चाहिये।

ज) समाजवाद – वल्लभभाई पटेल के प्रभाव के कारण ही हमारे संविधान में समाजवाद के सिद्धांतों को जगह दी गयी। यह पहले कभी नहीं था जैसा कि वर्तमान संविधान में है।

झ) अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षण – समायोजन के सिद्धांत से संबंधित प्रावधान के समांनांतर ही संविधान सभा ने समाज के अल्पसंख्यक तबकों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करने का प्रावधान किया था। संविधान सभा की दो महिला सदस्यों ने इस सिद्धांत को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इनमें अमृत कौर तथा बेगम एजाज रसूल प्रमुख थी जिन्होंने यह कहा कि सभी अल्पसंख्यक वर्ग भारत के आंतरिक भाग हैं उन्हें आरक्षण की जरूरत है ताकि उनके अधिकारों की रक्षा की जा सके।

ञ) वयस्क मताधिकार – संविधान सभा ने वयस्क मताधिकार को एकदम सही माना था। राजेन्द्र प्रसाद और जवाहर लाल नेहरु दोनों महत्वपूर्ण सदस्य थे जिन्होंने वयस्क मताधिकार का समर्थन किया था तथा सभी नागरिकों को वोट का अधिकार देकर अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) संविधान के दार्शनिक आधारभूत सिद्धांत क्या थे?

....

....

....

....

2.4 भारत की संविधान सभा और शैक्षिक विचार–विमर्श (बाहय)

जैसा कि पहले कहा जा चुका है संविधान सभा के सदस्यों का चुनाव सार्वभौम वयस्क मताधिकार से नहीं हुआ था। उनका चुनाव प्रतिबंधित वयस्क मताधिकार प्रणाली से हुआ था जिसका प्रमुख आधार शैक्षिक योग्यता एवं संपत्ति थी। कुछ आलोचक यह कहते है कि यह सभा विशिष्ट लोगों की संस्था थी जिसमें आम लोगों का प्रतिनिधित्व नहीं था। जय प्रकाश नारायण ने इसे ''प्रतिबधित और नियंत्रित संविधान सभा'' कहा था जो कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद की उपज थी और यह देश को स्वतंत्रता दिलाने में भी असमर्थ थी। चर्चिल ने कहा कि यह सभा ''केवल एक समुदाय को प्रतिनिधित्व करती थी'' तथा विन्सेंट साइमन के लिये यह ''हिन्दुओं की संस्था थी''। संविधान सभा की कार्य–प्रक्रिया, संगठन तथा इसके चरित्र को भी आलोचना की गयी है क्योंकि इसमें काँग्रेस पार्टी का वर्चस्व अधिक था क्योंकि विभाजन के बाद काँग्रेस का इसमें बहुमत था। प्रोफेसर सिबन लाल सक्सेना

का मानना था कि काँग्रेस पार्टी की मीटिंग ही वास्तव में संविधान सभा की मीटिंग में तबदील हो गयी थी तथा यह वास्तविक सभा एक दिखावटी सभा बनकर रह गयी थी क्योंकि जो भी चर्चा काँग्रेस पार्टी में होती थी वो ही इसमें दर्ज होती थी।

यद्यपि संविधान सभा को भारत के बहुसख्यक लोगों का विश्वास हासिल था फिर भी कुछ आलोचक यह मानते थे कि इसमें केवल राजनीतिज्ञ और अधिवक्ताओं का ही वर्चस्व था। इसका परिणाम यह हुआ कि इसके कारण देश को बहुत बड़ा दस्तावेज मिला। इस प्रकार संविधान की प्रायः आलोचना भी की जाती है क्योंकि इसे अधिवक्ताओं का स्वर्ग कहा जाता है। इसी आलोचना में एस. के. चौबे ने इस बात पर जोर दिया कि संविधान सभा एक अद्वितिय सभा थी जो कि डोमिनियन भारत की प्रथम सार्वभौम संस्था थी जो स्थिरता एवं अनुकूलन क्षमता के बीच संतुलन बना रही थी। ऑस्टिन ने टिप्पणी की कि लिखित संविधान का महत्व समाज के नियमों के लिये आवश्यक होता है, जो कि भारत के संविधान में यह साबित किया है अपने अनुभवों से। कश्यप ने यह तर्क दिया कि भारत का संविधान केवल राजनीतिक एवं कानूनी दस्तावेज नहीं है बल्कि यह नागरिकता के मूल्यों का चार्टर है। संविधान सभा के मुख्य बिन्दुओं पर प्रकाश डालते हुए, जो कि जवाहरलाल नेहरु ने 13 दिसंबर, 1946 को संविधान सभा में पेश किये थे, सुभाष कश्यप ने टिप्पणी की कि ''ये प्रमुख बिन्दु संविधान की दिशा एवं मुख्य मूल्यों का चित्रण करते है तथा प्रस्तावित उद्देश्य संविधान के मौलिक तत्व भी है। ये प्रस्ताव से कहीं ज्यादा थे। यह एक घोषणा थी, सुदृढ़ संकल्प, सूझबूझ और समर्पण था। इस प्रस्ताव में संविधान सभा को दिशा–निर्देश भी दिया तथा संविधान निर्माण में दार्शनिक कार्य भी किया।

2.5 सारांश

भारत का संविधान एक दृष्टि दस्तावेज है जो बिना, वर्ग, जाति, नस्ल तथा जन्म स्थान के आधार पर सभी के कल्याण के बारे में बात करना है। यह दृष्टि संविधान की प्रस्तावना एवं अन्य भागों में दर्शित है। इसमें कुछ आधारभूत सिद्धांत जैसे लोकतंत्र, संप्रभुता, समायोजना, आमसहमति समाजवाद एवं अल्पसंख्यकों तथा पिछड़े वर्गों के अधिकारों की बात भी कही गयी है। ये आधारभूत सिद्धांत भारतीय एवं पश्चिमी दार्शनिक परंपरा का मिश्रण हैं। संविधान सभा का दर्शन मूल रूप से जवाहरलाल नेहरु के उद्देश्य प्रस्ताव से मिलता है जो उन्होंने 1946 को दिये थे बाद में ये सिद्धांत ही संविधान सभा में चर्चा का आधार साबित हुए थे। दार्शनिक सिद्धांत संविधान निर्माताओं को नैतिक और राजनीतिक प्रतिबंद्धता का मार्गदर्शक करते हैं। ये विभिन्न सामाजिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि का प्रतिनिधि करते थे। विभिन्न विचारों के बावजूद वे समान लक्ष्यों पर सहमत हुए थे जैसे कि भारत को एक संप्रभु, समाजवादी धर्मनिरपेक्ष गणराज्य बनाना जिसमें सभी वर्गों का कल्याण तथा देश की एकता एवं अखंडता सुरक्षित की जा सकें। यह दृष्टि तभी संभव है जब संविधान का आधार दार्शनिक आधारभूत सिद्धांतों पर हो।

2.6 उपयोगी संदर्भ

बसु, दास दुर्गा, (2011), भारत के संविधान का परिचय, नई दिल्ली, नागपुर, आगरा, वर्धा, कंपनी (लॉ प्रकाशन)

चौबे, एस. के (1976), भारत की संविधान सभा, क्रांति की प्रतीक, नई दिल्ली, मनोहर प्रकाशन

ग्रेनविल ऑस्टिन, (2002) लोकतांत्रिक संविधान की कार्यप्रणालीः भारत का अनुभव, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड, यूनिवर्सिटी प्रेस

कश्यप, सुभाष, (1997), नागरिक और संविधान, सूचना और प्रशासन मंत्रालय, नई दिल्ली

खोसला, माधव, (2012), भारतीय संविधान, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) भारतीय संविधान की दार्शनिक–पृष्ठभूमि का आधार संविधान सभा को बनावट के चरित्र को जाता है। यद्यपि इसमें काँग्रेस का वर्चस्व था, फिर भी इसमें विभिन्न जातियों समूहों एवं राजनीतिक क्षेत्रों का भी प्रतिनिधित्व था। उन्होंने जनतांत्रिक मूल्यों की वकालत की जैसे, गणराज्य, शक्तियों का विभाजन, सीमाओं का बंटवारा, सार्वभौम वयस्क मताधिकार, अल्पसंख्यकों एवं कमजोर वर्गों का सम्मान करना।

अभ्यास प्रश्न 2

1) संविधान के दार्शनिक आधारभूत सिद्धांत ये हैं :– संप्रभुता, लोकतांत्रिक मूल्य, आम सहमति में निर्णय–निर्माण, समायोजना का सिद्धांत, मौलिक अधिकार, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद तथा वयस्क मताधिकार इत्यादि।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 3 प्रस्तावना*

संरचना

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 पृष्ठभूमि

3.2.1 वस्तुनिष्ठ संकल्प (Objectives Resolution)

3.2.2 वस्तुनिष्ठ संकल्पों की महत्ता

3.3 प्रस्तावना : मूल पाठ

3.3.1 प्रस्तावना में ''समाजवाद'', ''धर्मनिरपेक्षता'' और ''अखंडता''

3.4 सारांश

3.5 उपयोगी संदर्भ

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान सकेंगे :–

- प्रस्तावना के अर्थ एवं महत्व को समझना;
- भारत के संविधान के लक्ष्य एवं दर्शन की एक झलक प्राप्त करना;
- वस्तुनिष्ठ संकल्प (Objectives Resolution) के अर्थ का परीक्षण करना तथा प्रस्तावना में इसकी उत्पत्ति का विश्लेषण करना;
- प्रस्तावना और संविधान के बीच संबंधों की चर्चा करना; और
- प्रस्तावना में धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद के प्रवेश के कारकों का परीक्षण करना।

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तावना किसी भी संविधान की खिड़की की तरह होती है जिससे हम यह पता लगा सकते है कि इसके अंदर क्या है। भारत के संविधान में भी एक प्रस्तावना है। यह संविधान के प्रारंम्भ मे ही दी गयी है। मुख्य भाग यानी, भाग एक के पहले दी गयी है। यदि आप इस प्रस्तावना को पढ़ेंगे तो यह संविधान के लक्ष्य एवं दर्शन के बारे में एक झलक प्रस्तुत करती है। यह एक प्रकार का संकल्प है जिसे लोगों ने स्वयं के लिये पारित किया है उनके विकास के लिये। यह किसी अन्य स्रोतों से नहीं किया है बल्कि लोगों ने स्वयं इसे दिया है। यह भारत के लोगों की तरफ से संविधान सभा के सदस्यों ने लिखी थी। जैसा कि आपने इकाई संख्या एक में पढ़ा होगा, भारत के संविधान को संविधान सभा ने लिखा था, जिसमें उनके प्रतिनिधि शामिल थे।

आप यह जानकर अचंभित होंगे कि संविधान की प्रस्तावना को संविधान सभा के अंतिम सत्र में यानी अक्टूबर 1949 में लिखी गयी थी। संविधान सभा की प्रथम बैठक 6 दिसंबर 1946 को शुरू हुई थी तथा 26 नवंबर 1949 को समाप्त हुई थी। इसमें संविधान को अंगीकृत किया गया तथा 26 जनवरी 1950 को संविधान लागू भी हुआ।

* प्रोफेसर जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विद्यापीठ, नई दिल्ली।

3.2 पृष्ठभूमि

3.2.1 वस्तुनिष्ठ संकल्प (Objectives Resolution)

संविधान सभा में जो लक्ष्य एवं उद्देश्यों के उपर चर्चा की गयी उन्हें पहली बार जवाहर लाल नेहरु ने 'वस्तुनिष्ठ संकल्प' (Objectives Resolution) के रूप में तैयार किया था। संविधान सभा में, इसे जवाहरलाल नेहरु ने प्रस्तुत किया तथा पुरूषोत्म दास टंडन ने उनका समर्थन किया। संविधान सभा में चर्चा के बाद अधिकतर वस्तुनिष्ठ संकल्पों को प्रस्तावना के रूप स्वीकार कर लिया गया था। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि वस्तुनिष्ठ संकल्पों को संविधान सभा ने अपनी बहस में शुरू में ही स्वीकार कर लिया था, लेकिन इन्हें प्रस्तावना में अंत में रूपांतरित किया गया। इन वस्तुनिष्ठ संकल्पों का उद्देश्य था संविधान सभा को कुछ इशारा देना कि उसके सदस्य क्या करना चाहते है, वे क्या प्राप्त करना चाहते है, तथा वे कहां जा रहे हैं।

वस्तुनिष्ठ संकल्पों का प्रमुख लक्ष्य था एक ऐसे संविधान का निर्माण करना जिसे संविधान सभा ने अपनी बहस एवं चर्चा के बाद तैयार किया था। वस्तुनिष्ठ संकल्पों का एक मात्र उद्देश्य लोगों को यह शपथ दिलाना था कि वे अपने भविष्य के निर्माता स्वयं ही है। इन संकल्पों ने भारत के संविधान के भविष्य के लिए कुछ मौलिक सिद्धांतों की आधारशिला रखी थी। इनमें सबसे प्रमुख था, ''संप्रभु भारतीय गणराज्य''। वास्तव में यह पहली बार था जब संकल्पों के अंदर ''गणराज्य'' की अवधारणा का प्रयोग किया गया। जब इन संकल्पों को संविधान सभा में लाया गया तब राज्यों के प्रतिनिधि इसमें उपस्थित नहीं थे तथा मुस्लिम लीग ने इसका बहिस्कार भी किया था। लेकिन नेहरु ने यह कहा कि उनकी अनुपस्थिति के बावजूद भी ''गणराज्य'' में पूरे भारत को शामिल किया जायेगा।

3.2.2 वस्तुनिष्ठ संकल्पों का महत्व

जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में वस्तुनिष्ठ संकल्प का उद्देश्य ''यह संदेश देना था कि हमने क्या करने का संकल्प किया है।'' और संविधान में सभा में चर्चा के बाद हमें एक संविधान का निर्माण करना है, ''चाहे किन्हीं शब्दों में, इसे हम बाद में देख लेंगे'' (संविधान सभा बहस, खण्ड 1, दिसम्बर 13, 1946)। और आखिर चर्चा के बाद करीब तीन वर्षो में संविधान सभा संविधान को बनाने में सफल रही, जैसा कि इकाई संख्या एक में दिया गया है। यह 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया था। संविधान को बनाने के बाद संविधान ने इसके प्रस्तावना का मसौदा भी तैयार किया था। इस प्रस्तावना में वस्तुनिष्ठ संकल्पों की समानता देखने को मिलती है। संविधान सभा में 9 दिसंबर, 1946 के आरम्भ होने के पांच दिन बाद ही वस्तुनिष्ठ संकल्पों को 13 दिसंबर, 1946 संविधान सभा में प्रस्तुत किया गया था।

वस्तुनिष्ठ संकल्पों ने कुछ मौलिक सिद्धांतों की पहचान की थी जो संविधान के ढ़ांचे के लिए दिशा निर्देश थे। ये सिद्धांत ही हमारे राजनीतिक व्यवस्था के चरित्र की आधारशिला रखेंगे तथा इनका मुख्य उद्देश्य संविधान में व्यवस्थित ढ़ांचे की रचना करना था। इन सिद्धांतों ने ही हमारी राजनीतिक व्यवस्था का चरित्र, उसकी क्षेत्रीय सीमा, इकाईयों के बीच शक्तियों का बंटवारा, सभी शक्तियों का स्रोत आम जनता, सभी को सामाजिक न्याय प्रदान करना, तथा अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करना जैसे सिद्धांतों की आधारशिला रखी थी।

इन आधारभूत सिद्धांतों को वस्तुनिष्ठ संकल्पों में दिया गया है। खंड 1, संविधान सभा की बहस ये इस प्रकार हैः–

1) संविधान सभा इस बात का संकल्प लेती है कि भारत एक स्वतंत्र संप्रभु गणराज्य होगा तथा इसके शासन के लिए एक संविधान होगा।

2) जिसमें, जो क्षेत्र अब ब्रिटिश भारत का है वो भारत के राज्यों का होगा, तथा वे भाग जो ब्रिटिश भारत से अलग है वे भी इसके भाग होंगे और यह स्वतंत्र संप्रभु भारत गणराज्य होगा, तथा यह सभी का संघ होगा।

3) जिसमें, जो भी क्षेत्र हैं, उनका निर्धारण संविधान सभा करेगी तथा बाद में उसका निर्धारण संविधान के कानून के अनुरूप होगा, ये सभी स्वायत्त इकाइयां होंगी, तथा इन्हें अवशिष्ट शक्तियां भी प्राप्त होंगी, तथा प्रशासन के सभी कार्यों को करेगी, तथा जो कार्य संघ के अधीन आते है उनको छोड़कर सभी कार्य करेंगी।

4) जिसमें, सभी शक्तियां चाहे वो संप्रभु भारत गणराज्य हो या सरकार का कोई भी अंग हो सभी शक्तियां भारत के लोगों से प्राप्त होंगी। जनता सभी शक्तियां की मालिक होंगी।

5) जिसमें, सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय की गांरटी होगी, पद की समानता होंगी, सभी को समान अवसर प्रदान किये जायेंगे, तथा कानून समक्ष सभी समान होंगे, सभी को सोचने बोलने विश्वास करने, पूजा करने, संगठन बनाने की आजादी होगी लेकिन यह कानून एवं नैतिकता के तहत् होगी।

6) जिसमें, अल्पसंख्यकों को उचित सुरक्षा प्रदान की जायेगी, तथा पिछड़े आदिवासी इलाकों, एवं वंचित वर्गों की भी सुरक्षा की जायेगी

7) जिसमें, भारत गणराज्य की एकता एवं अखंडता कायम की जायेगी तथा इसकी जमीन, समुद्र, हवा की रक्षा की जायेगी जो कि कानून सम्मत होगी एवं सभ्य राष्टों की तरह होगी।

8) यह प्राचीन धरती विश्व में अपना उचित एवं सम्मानीय स्थान रखती है तथा यह विश्व में शांति एवं मनुष्यों के कल्याण में अपना योगदान देने को उत्सुक है।''

वस्तुनिष्ठ संकल्पों ने लोकतांत्रिक शब्द का इस्तेमाल नहीं किया था। इसके बारे में जवाहरलाल नेहरु ने अपने संकल्पों में 'गणराज्य' शब्द का जिक्र किया था जो कि 'लोकतंत्र' का ही दूसरा रूप है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि आधार तत्वों में न केवल लोकतंत्र का समावेश है बल्कि इसके अंदर आर्थिक लोकतंत्र का समावेश भी है। नेहरु ने यह भी महसूस किया कि इन आधार–तत्वों में समाजवादी राज्य का भी जिक्र नहीं है जिसके उपर भी विरोध हो सकता है। इस पर उन्होंने कहा कि भारत समाजवादी राज्य की तरफ बढ़ रहा है, और समाजवाद का रूप इस बात पर निर्भर करता है हमारी बहस एवं विचार–विमर्श की प्रवृति क्या होगी।

इन आधार–तत्वों को संविधान के भाग में शामिल किया जाना था जिसे संविधान सभा को करना था। लेकिन यह संविधान सभा के सदस्यों पर बाध्य नहीं था। उन्हें संविधान की रचना करने की पूरी आजादी थी। इन संकल्पों में केवल कुछ सिद्धांत ही दिये गये थे।

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) आधार तत्व वस्तुनिष्ठ क्या थे?

....

....

....

....

3.3 प्रस्तावना : मूल पाठ

संविधान की प्रस्तावना का मूल पाठ यहां दिया गया है :–

प्रस्तावना

हम, भारत के लोग, भारत को एक **सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न**
समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने
के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय,
विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म
और उपासना की स्वतंत्रता,
प्रतिष्ठा और अवसर की समता

प्राप्त कराने के लिए,
तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता
सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**
बढ़ाने के लिए
दृढ़संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर,
1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत् दो हजार छह विक्रमी)
को **एतदद्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित**
करते हैं।

जिन महत्वपूर्ण सदस्यों ने प्रस्तावना की बहस में हिस्सा लिया वे इस प्रकार थे :– मौलाना हसरत मोहानी, के. एम. मुंशी, एच. बी. थामस, पूर्णिया बनज, रोहिनी कुमार चौधरी और प्रोफेसर सिब्बनलाल सक्सेना। संविधान सभा ने प्रस्तावना के विभिन्न पहलुओं की चर्चा की। संविधान सभा से खंड 10 में विभिन्न सदस्यों के तर्कों को दिया गया है। उनमें प्रमुख बिन्दुओं को संविधान की प्रस्तावना में भी जगह दी गयी है। उदाहरण के लिए, मौलाना हसरत मोहानी ''संपन्न लोकतांत्रिक गणराज्य धर्मनिरपेक्ष'' की जगह प्रभुत्व संपन्न ''संघीय गणराज्य बनाना'' चाहते थे या ''प्रभुत्व संपन्न स्वतंत्र गणराज्य'' या फिर भारत को ''भारतीय संघ का समाजवादी गणराज्य बनाने की बात करते थे। एच. वी. कामथ चाहते थे कि ''दृढ़ संकल्प'' के स्थान पर ''ईश्वर के नाम पर'' शब्द होना चाहिए, जबकि रोहिणी कुमार चौधरी चाहते थे कि इन शब्दों के स्थान पर ''देवी के नाम पर'' होना चाहिए। इन संशोधनों एवं सुझावों को संविधान सभा ने अस्वीकार कर दिया था। संविधान में प्रस्तावना को विभिन्न पहुलओं पर चर्चा करने के बाद जोड़ा गया था। बहस के अंत में डा. राजेन्द्र प्रसाद ने यह ''प्रश्न'' कि प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है'' पर वोट देने के लिए सभा में प्रस्तुत किया।

यह सवाल प्रायः उठाया जाता है कि प्रस्तावना संविधान का भाग है या नहीं । इस सवाल के जवाब में दो अंतविरोधी उत्तर दिये गये थे। पहला 1966 का बेरुबरी मामला जिसमें कहा गया कि प्रस्तावना संविधान का हिस्सा नहीं है। जबकि दूसरा केस 1973 का केशवानंद भारती केस, जिसमें यह कहा गया संविधान की प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है। इसने बेरूबारी केस के निर्णय को पलट दिया था जिसमें संविधान की प्रस्तावना को इसका भाग मानने से इंकार कर दिया था। केशवानंद भारती केस के मामले मे यह भी निर्णय दिया कि संसद संविधान के किसी भी भाग में संशोधन कर सकती है बशर्ते कि इसके मूल ढ़ांचे का उल्लंघन न किया गया हो। इस प्रकार संविधान के अनुच्छेद 368 के अनुसार, संसद ने 42वें संविधान संशोधन अधिनियम के तहत् संविधान की प्रस्तावना में धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी तथा अखंडता शब्दों को शामिल किया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने बोम्मई केस में 1994 जिसमें राष्टपति को राज्य सरकारों को बर्खास्त करने का अधिकार दिया गया है, इसमें भी धर्मनिरपेक्ष शब्द की चर्चा की गयी है। इस निर्णय में यह कहा गया कि, ''हम यह नहीं जानते कि संविधान में किस तरह से संशोधन किया जा सकता है ताकि इसके मूल ढ़ांचे से धर्मनिरपेक्षता को हटाया जा सके। ना ही हम यह जानते है कि संविधान अपने आप को समाप्त करने का कोई तरीका प्रदान करता है। अखिल भारतीय रिपोर्टर 1994, खंड 243, (राज 2015) में उद्धरण आधार तत्वों पर बहस संविधान सभा बहस, खंड 1 में नेहरु ने अपने भाषण में कहा कि मूलतः संविधान की प्रस्तावना संविधान का हिस्सा नहीं होगी। जैसा पहले कहा गया है, संविधान सभा अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने प्रस्तावना के ड्राफ्ट को संविधान सभा के पट पर के चुनाव के लिए प्रश्न रखा था कि प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है। केशवानंद भारती केस ने इस सवाल को समाधान किया और तब से यह संविधान का हिस्सा है। 1995 में, जीवन बीमा केस में, फिर से सर्वोच्च न्यायालय ने यह पुष्टी की कि प्रस्तावना संविधान का ही भाग है।

3.3.1 ''समाजवादी'', ''धर्मनिरपेक्षता'' और ''और अखंडता संविधान की प्रस्तावना में

संविधान की मूल प्रस्तावना में ''समाजवाद'', ''धर्मनिरपेक्षता'' और ''और अखंडता'' नहीं दिये गये थे। संविधान निर्माताओं ने इन शब्दों को संविधान में शामिल करने की जरूरत को महसूस नहीं किया क्योंकि संविधान के अंदर विभिन्न प्रावधान ऐसे हैं जो कि संविधान को धर्मनिरपेक्ष दस्तावेज की संज्ञा देते है तथा इनसे समाजवाद को प्राप्त किया जा सकता था। लेकिन इन अवधारणाओं को 1976 में संविधान के 42वें संशोधन के बाद संविधान की प्रस्तावना में शामिल कर लिया गया था।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) (आधार तत्वों) वस्तुनिष्ठ संकल्पों एवं प्रस्तावना के बीच क्या संबंध थे?

....

....

....

....

....

2) क्या प्रस्तावना संविधान का भाग है?

....

....

....

....

....

3) 'धर्मनिरपेक्षता', 'समाजवाद' और 'और अखंडता' की अवधारणा संविधान की प्रस्तावना में कब जुड़ा?

....

....

....

....

....

3.4 सारांश

भारतीय संविधान की प्रस्तावना संविधान के लक्ष्य एवं उसके दर्शन की झलक दिखाती है। यह भारतीय लोगों की संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक गणराज्य स्थापित करने का संकल्प प्रदान करती है। इस गणराज्य में, लोगों को सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक न्याय मिलेगा, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास और पूजा की स्वतंत्रता मिलेगी तथा अवसर एवं प्रतिष्ठा की समानता प्राप्त होगी। यह लोगों में बंधुता तथा राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करेगी। प्रस्तावना को संविधान के अंत में लिया गया था जब संविधान सभा ने संविधान का कार्य पूरा कर लिया था। यह संविधान सभा में जवाहरलाल नेहरु द्वारा दिये गये आधार तत्वों के अतंगर्त संविधान सभा के उद्घाटन सत्र के पांचवे दिन उभर कर सामने आये थे। इनका पुरूषोत्तम दास टंडन ने समर्थन किया था। आधार तत्व लोगों को यह शपथ दिलाने के लिये थे जिसे उनके प्रतिनिधियों ने संविधान सभा में संविधान को अंगीकृत किया था। इस शपथ को उन्होंने संविधान को लिखकर पूरा किया था। आधार तत्व संविधान का भाग नहीं थे जबकि प्रस्तावना इसका भाग थी। यह केशवानंद भारती फैसले के बाद 1973 में संविधान का भाग बनी थी। इससे पहले बेरूबारी निर्णय 1960 के समय इसे संविधान का भाग नहीं माना था। केशवानंद भारती केस ने बेरूबारी केस को पलट दिया था और यह स्थापित किया कि प्रस्तावना संविधान का ही भाग है। मूल प्रस्तावना में ''धर्मनिरपेक्षता'', ''समाजवाद'' और ''अखंडता'' जैसे शब्दों का कहीं जिक्र नहीं था। इन्हें संविधान के 42वें संशोधन के बाद शामिल किया गया था। 1994 के बोम्भई केस के बाद यह फैसला आया कि धर्मनिरपेक्षताा संविधान के मूल ढ़ांचे का भाग है।

3.5 उपयोगी संदर्भ

बक्षी, पी. एम. (2007), भारत का संविधान, यूनिवर्सल लॉ प्रकाशन कंपनी

बसु, डी. डी. (2011), भारत के संविधान का परिचय, नागपुर, लेक्सिस, नेक्सिस बरटवर्थ वर्धा।

संविधान सभा की बहस, खंड,1 (13 दिसंबर, 1946)

संविधान सभा की बहस, खंड,10 (17 अक्टूबर, 1949)

ग्रेनविस ऑस्टिन, (2012), भारतीय संविधान : राष्ट की आधारशिला, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

खोसला, माधव (2012), भारतीय संविधान, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

राज, कालीसवरम (2015), Rethinking the Preamble, Dec, http://www./livelaw.in/rethinking-the-preamble (वेबसाइट दिसंबर 17, 2018)

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) आधार तत्वों को संविधान सभा में पांचवे दिन यानि 13 दिसंबर 1946 को जवाहरलाल नेहरु द्वारा प्रस्तुत किया गया था। ये तत्व संविधान के मूलाधार थे तथा इसकी प्रस्तावना के जिसे संविधान सभा द्वारा तैयार किया गया था। इसने यह सुझाव दिया कि भारत एक संप्रभु गणराज्य बनेगा जहां सभी को न्याय दिया जायेगा।

अभ्यास प्रश्न 2

1) आधार–तत्वों को संविधान सभा के शुरू में ही चर्चा के लिये प्रस्तुत किये गये थे तथा संविधान की प्रस्तावना बाद में लिखी थी जब संविधान का कार्य पूरा हो चुका था। आधार तत्व संविधान में चर्चा का आधार प्रदान करते है जबकि प्रस्तावना संविधान के लिये एक खिड़की का कार्य करती है जहां से सब कुछ दिखाई देता हो। यह संविधान के प्रमुख अवयवों को प्रस्तुत करती है। प्रस्तावना वास्तव में आधार तत्वों का ही दूसरा रूप है जो कि संविधान सभा में चर्चा के बाद उभर कर सामने आयी थी।

2) केशवानंद भारती केस 1973, के अनुसार प्रस्तावना संविधान का भाग है।

3) ''धर्मनिरपेक्षता'', ''समाजवाद'' और ''अखंडता'' की अवधारणा को संविधान की प्रस्तावना में संविधान के 42वें संशोधन के पश्चात् शामिल किया गया था। बोम्मई केस के बाद प्रस्तावना संविधान के मूल ढ़ांचे का भाग है।

इकाई 4 मौलिक अधिकार*

संरचना

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य
 4.2.1 1925 का राष्ट्रमंडल विधेयक
 4.2.2 1928 की नेहरु रिपोर्ट
 4.2.3 1945 की सप्रू रिपोर्ट
 4.2.4 मौलिक अधिकारों पर उप–समिति
4.3 मौलिक अधिकारों की प्रमुख विशेषताऐं
4.4 छः प्रमुख मौलिक अधिकार
 4.4.1 समानता का अधिकार
 4.4.2 स्वतंत्रता का अधिकार
 4.4.3 शोषण की विरूद्ध अधिकार
 4.4.4 धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार
 4.4.5 सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अधिकार
 4.4.6 संविधानिक उपचारों का अधिकार
4.5 मूल आधार सिद्धांत
4.6 मौलिक अधिकारों पर उचित प्रतिबंध
4.7 सारांश
4.8 उपयोगी संदर्भ
4.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप यह समझ सकेंगे :

- मौलिक अधिकारों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य;
- उनकी प्रमुख विशेषताएं;
- छः प्रमुख मौलिक अधिकार; और
- मौलिक अधिकारों पर उचित प्रतिबंध।

4.1 प्रस्तावना

आपने इकाई संख्या 3 में भारतीय संविधान की प्रस्तावना के बारे में पढ़ा होगा जिसमें यह कहा गया है कि ''हम भारत के लोग'' सभी नागरिकों के लिए स्वतंत्रता, समानता, न्याय, सुरक्षा तथा सम्मान प्राप्त करने का वचन लेते है। इन प्रतिबद्धों को संविधान के भाग तीन एवं भाग चार में रखा गया है। भाग तीन मौलिक अधिकारों से संबंधित है जबकि भाग चार

* डा. दिव्या रानी, अकादमिक ऐसोसियेट, राजनीति विज्ञान, इग्नू, नई दिल्ली।

राज्य के नीति–निर्देशक सिद्धांतों से संबंधित है। आप नीति–निर्देशक सिद्धांतों के बारे में इकाई संख्या 5 में विस्तार से पढ़ेंगे। मौलिक अधिकार न्यायाचित है। इसका अर्थ यह है कि यदि कोई व्यक्ति मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करता है तो वह व्यक्ति जिसके अधिकार का उल्लंघन हो रहा है वह उसके लिए न्यायालय के पास जा सकता है। लेकिन आप इकाई 5 में पढ़ेंगे कि नीति–निर्देशक सिद्धांतों के लिए ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। ये पूरी तरह से गैर न्यायाधिकृत है। अर्थात् यदि राज्य नीति–निर्देशकों का अनुपालन नहीं करता है तो नागरिक उसके खिलाफ न्यायालय के पास नहीं जा सकता।

4.2 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

अधिकारों की अवधारणा जिसे हम मौलिक अधिकार कहते है, इनका उद्भव 19वीं शताब्दी में हुआ था। ऑस्टिन के अनुसार मौलिक अधिकारों की अवधारणा 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के समय से ही आ गयी थी। जिसमें भारतीय नागरिक भी ब्रिटिश नागरिकों के समान अधिकार एवं प्रलाब्ध चाहते थे। इनमें से कुछ अधिकारों को दस्तावेजों जैसे कि भारतीय संविधान विधेयक, 1895 के अंतर्गत शामिल किये गये। यह विधेयक भारतीय नागरिकों को कुछ अधिकार प्रदान करता है जैसे, भाषण की स्वतंत्रता अधिकृत अधिकारी द्वारा ही जेल भेजना तथा राज्य द्वारा मुफ्त शिक्षा व्यवस्था करना। आगे के वर्षों में भारतीयों को और अधिकार देने की माँग का प्रयास किया गया। इन माँगों को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने प्रस्तावों में भी शामिल किया विशेषकर, 1917 एवं 1919 के विभिन्न विधेयक एवं समिति रिपोर्टों में यह शामिल किया गया। 1925 में ऐनी बेसेंट द्वारा भारत के लिए राष्ट्रमंडल विधेयक का मसविदा तैयार किया गया था, 1928 में नेहरु रिपोर्ट, 1945 में सप्रू रिपोट्र तथा मौलिक अधिकारों से संबंधित संविधान सभा की उप–समितियां भी बनायी गयी थी।

4.2.1 भारतीय राष्ट्रमंडल विधेयक, 1925

राष्ट्रमंडल विधेयक ने भारतीयों के लिये सात मौलिक अधिकारों की माँग की। इन अधिकारों में शामिल है :– व्यक्तिगत स्वतंत्रता, विवेक की आजादी, बात करने की आजादी, एकत्रित होने की स्वतंत्रता तथा कानून के समक्ष समानता इस विधेयक में प्राथमिक शिक्षा को मुफ्त रखने का भी प्रावधान था, मार्ग का समान रूप से प्रयोग करना, न्याय का प्रावधान एवं व्यवसाय करने के स्थान के लिए समान व्यवस्था करने का भी प्रावधान था।

4.2.2 नेहरु रिपोर्ट, 1928

राष्टमंडल विधेयक के प्रिंट होने के तत्पश्चात् 1927 में साइमन कमीशन ने भारत का दौरा किया जिसका मूल मकसद था भारत में संविधानिक सुधार की संभावनाओं का परीक्षण करना। साइमन कमीशन के जवाब में, कॉंग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें एक समिति के गठन का प्रावधान था। यह समिति मद्रास में आयोजित वार्षिक सत्र में गढ़ित की गयी थी जिसका उद्देश्य था ''भारत के लिए स्वराज संविधान'' का मसौदा तैयार करना।

इस मसौदे का मूल उद्देश्य था अधिकारों की घोषण करना। संविधान का मसौदा तैयार करने की जिम्मेदारी समिति को दी गयी। इस समिति का नाम था नेहरु समिति, जिसके अध्यक्ष थे मोतीलाल नेहरु। नेहरु रिपोर्ट ने मौलिक अधिकारों को प्राप्त करने की जरूरत को रेखांकित किया जो कि औपनिवेशिक शासन ने उन्हें देने से मना कर दिया था। वास्तव

में नेहरु रिपोर्ट में जो मौलिक अधिकारों से संबंधित प्रावधान थे वे राष्ट्रमंडल विधेयक में शामिल अधिकारों की ही पुनरावृति थी। इस रिपोर्ट ने अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करने की जरूरत को भी रेखांकित किया था। कॉंग्रेस पार्टी ने अपने 1931 में हुए कराची सत्र में जनता के शोषण को समाप्त करना तथा राजनीतिक स्वंतत्रता के साथ–साथ आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने की जरूरत को महसूस किया। इसने यह भी सुझाव दिया कि मजदूर वर्ग के हितों की रक्षा के लिए उपर्युक्त कानून भी बनाया जाये।

4.2.3 सप्रू रिपोर्ट, 1945

सप्रू समिति का कार्य था भारत के भविष्य के लिए संविधान निर्माण के कार्य को गति प्रदान करना। इस समिति में 30 सदस्य थे। इसका नाम सप्रू समिति रखा गया था क्योंकि इसके अध्यक्ष तेज बहादुर सप्रू थे जो कि एक जाने माने वकील थे। यह रिपोर्ट 1945 में प्रकाशित हुई थी। सप्रू समिति ने अधिकारों से संबंधित दो सुझावों की वकालात की थी। पहला सुझाव था, न्यायोचित एवं गैर–न्यायोचित अधिकारों के बीच अंतर बताना तथा दूसरा सुझाव था अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा होनी चाहिए।

4.2.4 मौलिक अधिकारों पर उप–समिति

आपने इकाई संख्या एक में पढ़ा होगा, संविधान सभा ने संविधान में सुझाव शामिल करने के लिए विभिन्न समितियों का गठन किया था। इनमें से एक समिति वह थी जिसे मौलिक अधिकारों, अल्पसंख्यकों के अधिकारों एवं जनजातिय अधिकारों के ऊपर अपने सुझाव प्रस्तुत करने थे। इस समिति के अध्यक्ष सरदार वल्लभ भाई पटेल थे। इस समिति को विभिन्न उप–समितियों में विभाजित किया गया था। इनमें से एक उप–समिति मौलिक अधिकारों पर भी थी। इस समिति के अध्यक्ष जे. बी. कृपलानी थे। इस समिति समाज के विभिन्न वर्गों से लोगों का प्रतिनिधित्व था जिनमें महिलाएं अमृत कौर एवं हंसा मेहता भी शामिल थी इस समिति का सबसे प्रभुत्व निर्णय था मौलिक अधिकारों को न्यायोचित मानना एवं न्यायाधिकृत अधिकार स्वीकार करना। इस समिति के सुझावों को संविधान के भाग 3 में शामिल किया गया था जब संविधान सभा में इनके ऊपर चर्चा कर ली गयी थी।

4.3 मौलिक अधिकारों की प्रमुख विशेषताऐं

मौलिक अधिकारों की महत्वपूर्ण विशेषताऐं इस प्रकार हैः–

i) सभी व्यक्ति कानून के समक्ष समान है। अर्थात् सभी नागरिक कानून के अंतर्गत समान है। उन्हें धार्मिक स्वंतत्रता है, संगठन बनाने का अधिकार है तथा आंदोलन करने का समान अधिकार है। किसी भी व्यक्ति को उनके जीवन, स्वतंत्रता या संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता यदि ये कानून के मुताबिक हो।

ii) अल्पसंख्यकों को उनकी भाषा, संस्कृति एवं लिपि को संरक्षित एवं सुरक्षित रखने की अनुमति है। मौलिक अधिकार वास्तव में व्यक्तियों को सुरक्षित रखते हैं तथा अल्पसंख्यक समुदाय को भेदभाव, राज्य कार्यवाही एवं पक्षपात से सुरक्षित रखा जाता है। संविधान में तीन अनुच्छेद व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान करने के लिए बनाये गये हैं। संविधान के अनुच्छेद 17 के अंतर्गत अस्पृश्यता यानी छूआछूत को समाप्त कर दिया गया है, अनुच्छेद 15 (2) के अंतर्गत किसी भी नागरिक को उनकी जाति, धर्म, नस्ल, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर सार्वजनिक स्थानों, दुकानों रेस्टोरेंट, कुँए, सड़क इत्यादि के प्रयोग करने पर प्रतिबंध नहीं होना चाहिए, तथा अनुच्छेद 23 के

अंतर्गत, बाल शोषण और बंधुआ मजदूरी पर रोक है। यह मुख्य रूप से मालिक और मजदूर या किसान के बीच का मामला अधिक है।

iii) कई प्रकार के साधन प्रदान किये गये हैं ताकि कोई भी नागरिक मौलिक अधिकारों को लागू करवाने के लिए सर्वोच्च न्यायालय या अन्य न्यायालय का दरवाजा खटखटाा सकते हैं। दो प्रकार के उपाय किये गये हैं जिनके द्वारा मौलिक अधिकारों को लागू करवाया जा सकता है। पहला न्यायिक समीक्षा (न्यायिक पुनरावलोकन) तथा दूसरा याचिकाओं द्वारा। यदि किसी व्यक्ति के अधिकारों का उल्लंघन होता है तो याचिकाऐं दाखिल की जा सकती है। ये दोनों उपचार अनुच्छेद 32 के अंतर्गत दिये गये हैं।

iv) मौलिक अधिकार प्राकृतिक एवं कानूनी दोनों ही है।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) 1925 का राष्ट्रमण्डल विधेयक क्या था?

....

....

....

....

....

2) नेहरु रिपोर्ट और सप्रू रिपोर्ट की महत्वपूर्ण विशेषताऐं क्या थी?

....

....

....

....

....

4.4 छः प्रमुख मौलिक अधिकार

मूल संविधान (1950) में सात मौलिक अधिकार थे। लेकिन 44वें संशोधन के बाद 1978 में इन्हें छः कर दिया गया। इस संशोधन ने सातवें मौलिक अधिकार ''सम्पति'' के अधिकार को समाप्त कर दिया था। यह अधिकार अनुच्छेद 31 के अंतर्गत था। आप नीचे इन अधिकारों के बारे में उप–इकाई में अध्ययन करेंगे।

4.4.1 समानता का अधिकार

अनुच्छेद 14 से 18 तक समानता के अधिकार से संबंधित है। अनुच्छेद 14 में कहा गया है कि राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता से वंचित नहीं करेगा तथा भारत के किसी भी क्षेत्र में उन्हें समान रूप से कानून के द्वारा सुरक्षा प्राप्त होगी। इस प्रकार यह अधिकार सभी व्यक्तियों को कानून के समक्ष समानता का अधिकार प्रदान करता

है। किसी भी व्यक्ति, धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म के स्थान पर उनके साथ भेदभाव नहीं किया जायेगा। अनुच्छेद 15,16,17, और 18 सामाजिक एवं आर्थिक समानता से संबंधित है। अनुच्छेद 15 राज्य को किसी भी व्यक्ति के विरूद्ध धर्म, भाषा, जाति के आधार पर भेदभाव करने को निषेध मानता है। हालांकि राज्य कुछ विशेष सकारात्मक नीतियां बना सकता है महिलाओं, बच्चों, सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों एवं अनुसूचित जाति एवं जन जाति वर्गों के लिए। यह अधिकार किसी भी व्यक्ति को सार्वजनिक स्थानों, रेस्टोरेंन्ट होटल, दुकान या मनोरंजन के स्थानों, कुंओं का प्रयोग करने, इत्यादि का प्रयोग करने में किसी भी प्रकार के भेदभाव को निषेध मानता है।

अनुच्छेद 16 सभी नागरिकों को समान अवसर प्रदान करने की गारन्टी देता है। यह अनुच्छेद सभी नागरिकों को रोजगार के अवसर प्रदान करना तथा किसी भी प्रकार के भेदभाव को निषेध मानता है। राज्य किसी भी नागरिक को धर्म, जाति, लिंग, नस्ल या जन्म स्थान के आधार पर रोजगार के मामलों में भेदभाव नहीं कर सकता है। अनुच्छेद 17 के अंतर्गत अस्पृश्यता या छुआछूत का पूर्ण रूप से प्रतिबंध किया गया है। किसी भी प्रकार की छुआछूत का कानूनी रूप से दंडनीय अपराध माना गया हैं। अनुच्छेद 18 के अंतर्गत राज्य किसी भी प्रकार को उपाधि नहीं देगी सिवाय सेना या शैक्षिक प्रतिष्ठा के अलावा। कोई भी भारतीय नागरिक विदेशी राज्य से किसी भी प्रकार की उपाधि स्वीकार नहीं करेगा। कोई भी व्यक्ति जो पद पर आसीन हो वह किसी भी प्रकार का गिफ्ट, उपहार स्वीकार नहीं करेगा तथा कोई भी विदेशी उपहार भी स्वीकार नहीं करेगा।

4.4.2 स्वतंत्रता का अधिकार

स्वतंत्रता का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19 से 22 तक दिया गया है। स्वतंत्रता का अधिकार अपने आप में पूर्ण नहीं है। यह कानूनी रूप से नियंत्रित अधिकार है। अनुच्छेद 19 में निम्नलिखित अधिकार दिये गये है :–

i) भाषण एवं अभिव्यक्ति की आजादी – इसका मुख्य उद्देश्य भारत की एकता एवं संप्रभुता की रक्षा करना, राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध, कानून और व्यवस्था, नैतिकता स्थापित करना, तथा सार्वजनिक संपत्ति को गंदा ना करना या किसी गलत कार्य को उकसाना इत्यादि।

ii) बिना हथियारों के शांतिपूर्ण तरीके से एकत्रित होना, यह भारत की सुरक्षा एवं एकता एवं अखंडता को सुनिश्चित करता है, तथा शांति व्यवस्था कायम रखता है।

iii) संघ एवं संगठनों को गठित करना, यह भारत की संप्रभुता एवं एकता को संयोजित रखता हैं तथा लोक नैतिकता को भी बनाये रखता है। यह ''सहयोगिक समाज'' जो कि 2012 में 97वें संशोधन के द्वारा जोड़ा गया था, को भी शामिल करता है।

iv) भारत के किसी भी क्षेत्र में मुक्त भ्रमण करना, इससे आम नागरिक एवं अनुसूचित जनजातियों के हितों को सुरक्षित रखा जाता है।

v) भारत के किसी भी भूभाग में निवास करना या स्थायी आवास बनाना। तथा

vi) किसी व्यवसाय को शुरू करना, किसी भी कारोबार, व्यापार या व्यवसाय को करना, यह शिक्षित व्यवसाय पर आधारित होता है। इसके लिए योग्यताऐं होना आवश्यक है।

अनुच्छेद 20, 21 एवं 22 व्यक्तियों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सुनिश्चित करता है। सभी मौलिक अधिकारों में यह केन्द्रिय अधिकार है अर्थात् जीवन का अधिकार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार। 2002 में न्यायपालिका ने इस अधिकार की सही तरीके से व्याख्या

की थी। इसके अतिरिक्त, 2002 में 86 वें संविधान संशोधन के द्वारा, अनुच्छेद 21 ए भी जोड़ा गया था जिसमें राज्य छः वर्ष से चौदह वर्ष के बीच के बच्चों के लिए अनिवार्य एवं मुफ्त शिक्षा की गांरटी प्रदान करता है। पहले यह नीति–निर्देशक तत्वों के अनुच्छेद 45 में शामिल था। अनुच्छेद 20 राज्य द्वारा गैर कानूनी तरीके से पीड़ित व्यक्ति को मुफ्त सुनवायी की व्यवस्था का प्रावधान करता है। किसी भी व्यक्ति को सजा नही मिल सकती सिवाय किसी कानून के उल्लंघन करने के अतिरिक्त। अनुच्छेद 22 कें अंतर्गत विभिन्न प्रकार के खंड बनाये गये हैं जिसमें किन्हीं मामलों में गिरफ्तारी एवं सजा से संरक्षण प्रदान किया गया है।

4.4.3 शोषण के विरूद्ध अधिकार

भारत के संविधान में अनुच्छेद 23 एवं 24 शोषण के विरूद्ध अधिकार से संबंधित है। अनुच्छेद 23 बाल शोषण, बेगार तथा बंधुआ मजदूरी पर रोक लगाता है। अनुच्छेद 24 के अनुसार, 14 वर्ष से कम की आयु के बच्चों को किसी भी फैक्ट्री, कारखानें, या हानिकारक व्यवसाय में रोजगार नहीं दे सकते या उन्हें काम पर नहीं रख सकते हैं।

4.4.4 धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

अनुच्छेद 25 धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करता है। सभी व्यक्तियों को किसी भी धर्म की पूजा, उपासना करने का अधिकार प्राप्त है। लेकिन यह स्वतंत्रता नैतिकता, सार्वजनिक व्यवस्था एवं स्वास्थ्य पर निर्भर है। इसके अलावा संविधान के भाग तीन दिये गये प्रावधानों के अनुरूप होनी चाहिये। इस अनुच्छेद के मुताबिक कोई भी निर्धारित कानून इसको प्रभावित नहीं करेगा तथा राज्य को भी कानून बनाने से कोई भी रोक नहीं सकता।

i) किसी भी आर्थिक, वित्तिय, राजनीतिक या अन्य धर्मनिरेपेक्ष कार्य को नियमित करना जो कि धार्मिक कार्यों से संबंधित हो।

ii) सामाजिक कल्याण और सुधार प्रदान करना या हिंदू धार्मिक संस्थाओं को सभी वर्गों के लिए खोलना।

विवेक की स्वतंत्रता को दो अनुच्छेदों द्वारा मजबूत बनाया गया है। ये अनुच्छेद है 27 एवं 28। अनुच्छेद 27 में कहा गया है कि किसी भी व्यक्ति को किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि या रखरखाव में व्यय के लिये कोई कर अदा करने के लिये बाध्य नहीं किया जायेगा। अर्थात् यदि करों का इस्तेमाल सभी धर्मों की अभिवृद्धि के लिये किया जाता है तो कोई आपत्ति नहीं हो सकती। अनुच्छेद 28 पूर्णतया राज्य निधि से संचालित शैक्षिक संस्थाओं में कोई धार्मिक शिक्षा देने का पूर्णतः प्रतिषेध करता है। राज्य से मान्यता तथा सहायता प्राप्त संस्थाओं के मामलों में, प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक शिक्षा या उपासना में उपस्थित न होने की स्वतंत्रता होगी।

4.4.5 संस्कृति और शिक्षा का अधिकार

अनुच्छेद 29 एवं 30 संस्कृति और शिक्षा के अधिकार से संबंधित है। अनुच्छेद 29 भारत में कहीं भी निवास करने वाले नागरिकों के प्रत्येक वर्ग को जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपि, या संस्कृति है, उसे बनाये रखने के अधिकार की गांरटी देता है। किसी भी नागरिक को राज्य द्वारा संचालित या उससे सहायता प्राप्त किसी भी शिक्षा संस्था में केवल धर्म, मूलवंश जाति या भाषा के कारण प्रवेश देने से इंकार नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद 30 के अनुसार धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रूचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और उनके प्रबंध का अधिकार होगा।

4.4.6 संवैधानिक उपचारों का अधिकार

अनुच्छेद 32 के अनुसार भारतीय संविधान मौलिक अधिकारों को लागू कराने के लिये समुचित कार्यवाही द्वारा देश के सर्वोच्च न्यायालय का द्वार खटखटाने के अधिकार की गारंटी देता है। उच्चतम न्यायालय जिन उपायों से मूल अधिकारों की रक्षा करता है उन्हें याचिका या न्यायिक प्रक्रिया कहा जाता है। ये रिट या न्यायिक प्रक्रिया इस प्रकार है :— बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार पृच्छा और उत्प्रेषण रिट। सर्वोच्च न्यायालय मूल अधिकारों को लागू कराने के लिये इन याचिकाओं का आदेश दे सकता है। इन रिटों का अर्थ इस प्रकार है :—

i) **बंदी प्रत्यक्षीकरण** — यह रिट जीवन के अधिकार की रक्षा करती है तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सुरक्षित रखती है। यह रिट न्यायालय द्वारा जारी की जाती है, यदि किसी व्यक्ति को बिना किसी सुनवायी के हिरासत में ले लिया गया हो तो उसे न्यायालय में प्रस्तुत किया जाता हैं। यह कार्यपालिका को चुनौती देती है यदि कार्यपालिका ने किसी व्यक्ति को कानून के विपरीत हिरासत में लिया हो। यह रिट कानून को भी चुनौती देती है यदि यह कानून गैर संविधानिक है। न्यायालय ऐसे व्यक्ति को बरी कर सकता है यदि उसे गैर—कानूनी तरीके से हिरासत में लिया गया हो। यदि इस रिट का उल्लंघन किया तो यह कोर्ट की अवमानना मानी जायेगी तथा उसे सजा भी मिल सकती है।

ii) **परमादेश** — परमादेश का अर्थ है आदेश। यह किसी भी अधिकारी द्वारा जारी किया जा सकता है। इसके द्वारा किसी भी व्यक्ति को अपनी डयूटी पूरी करने के लिये कहा जाता है जो कि उसने करने से मना कर दिया हो। यह आदेश राष्ट्रपति, राज्यों के राज्यपाल, तथा सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के विरूद्ध जारी नहीं किया जा सकता । यह किसी व्यक्तिगत या निजी संस्था के विरूद्ध भी नहीं जारी किया जा सकता।

iii) **प्रतिषेध** — यह रिट उच्च न्यायालय द्वारा जारी की जाती है। सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय निम्न कोर्ट को यह रिट जारी करता है। यह निम्न कोर्ट को अपने अधिकार क्षेत्र में सुनवायी के लिए किसी केस को निषेध मानती है।

iv) **अधिकार पृच्छा** — इस रिट के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय किसी निम्न कोर्ट द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र में रखे गये रिकार्ड को मंगा सकती है।

v) **उत्प्रेषण** — इस रिट के माध्यम से कोर्ट किसी व्यक्ति से उसके बारे में पूछ सकता है कि किस अधिकार क्षेत्र से वह किसी कार्यालय अथवा सत्ता में आसीन है।

4.5 मूलभूत आधार सिद्धांत

मूलभूत आधार सिद्धांत के अनुसार संसद किसी भी संशोधन के द्वारा संविधान के मूलभूत ढाँचे को नहीं बदल सकती। इसमें मूल आधिकार, न्यायिक समीक्षा, धर्मनिरपेक्षता तथा संसदीय लोकतंत्र शामिल है। यह सिद्धांत 1973 में सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय के बाद अस्तित्व में आया था। इसे हम केशवानंद भारती विरूद्ध केरल राज्य के केस के रूप में जानते है। इस केस में मठाधीश केशवानंद भारती ने सर्वोच्च न्यायालय में केरल सरकार के एक निर्णय को चुनौती दी थी। इसके अंदर केरल सरकार ने भूमि सुधार के तहत् निजी जमीन को अधिग्रहण कर लिया था। इस निर्णय के विरूद्ध में सर्वोच्च न्यायालय ने यह

फैसला सुनाया कि संविधान के मूल सिद्धांत अर्थात् मूल अधिकारों को परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। हालांकि सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी माना कि निजी संपत्ति का अधिकार संविधान का मूल ढाँचा नहीं है। इसके बाद 1978 में 44वें संविधान संशोधन के द्वारा संपत्ति के अधिकार को मूल अधिकारों से हटा दिया गया। जैसा कि मूल अधिकारों को लागू करना कोर्ट की जिम्मेदारी है इसलिए कोर्ट ही इन्हें विशेष रूप से संरक्षित रखती है। जैसा कि हम ऊपर पढ़ चुके हैं कोर्ट मूल अधिकारों की रक्षा के लिये रिट जारी करता है। केशवानंद भारती केस से पूर्व भी कोर्ट ने गोलकनाथ विरूद्ध पंजाब राज्य मामले में 1967 में भी मूल अधिकारों की रक्षा की थी। इस केस में कोर्ट ने संसद के अधिकारों में कटौती की थी ताकि वह मूल अधिकारों में कटौती न कर सके। 1975 में इंदिरा गाँधी विरूद्ध राज नारायण केस में सर्वोच्च न्यायालय ने मूल आधार सिद्धांत को प्रयोग किया था उसके बाद 39वाँ संविधान संशोधन को भी हटा दिया गया जिसमें यह कहा गया कि राष्ट्रपति, उप–राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री तथा लोक सभा अध्यक्ष के चुनाव को न्यायिक समीक्षा की परिधि से दूर रखा जाय।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) छः प्रमुख मूल अधिकार कौन–कौन से है?

....

....

....

....

....

2) मूल आधार सिद्धांत क्या है?

....

....

....

....

....

4.6 मौलिक अधिकारों पर उचित प्रतिबंध

भारतीय संविधान ने सभी नागरिकों को सुरक्षा के पुख्ता प्रबंध करने का प्रावधान किया है। इसमें सभी नागरिकों को विभिन्न अनुच्छेदों विशेषकर मौलिक अधिकारों के संबंध में उन्हें सुरक्षा प्रदान की है। हालांकि मौलिक अधिकार भी परिपूर्ण नहीं है। उनके ऊपर भी कुछ उचित प्रतिबंध लगाने का प्रावधान किया गया है। राज्य देश की सुरक्षा, एकता एवं संप्रभुता बनाये रखने के लिए स्वतंत्रता के अधिकार पर प्रतिबंध लगा सकता है। शांति व्यवस्था कायम करने के लिए कर्फ्यू लगाया जा सकता है तथा विदेशों के साथ अच्छे संबंध बनाये रखने के लिए प्रतिबंध लगाया जा सकता है। राज्य समानता के अधिकार पर भी कुछ उचित प्रतिबंध लगा सकता है जिसमें, समाज के वंचित, वर्गों खासकर महिलाओं, बच्चों

सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े हुए वर्गों तथा अनुसूचित जाति एवं जन जाति वर्गों के लिए कुछ कल्याणकारी नीतियों को लागू कर सकती है।

अनुच्छेद 33 के अंतर्गत संसद को यह अधिकार दिया गया है कि वह सुरक्षा बलों, सेना एवं पुलिस के मौलिक अधिकारों पर भी प्रतिबंध लगा सकती है। इस अनुच्छेद का मतलब है सुरक्षा बलों के अंदर अनुशासन की भावना कायम करना ताकि वे कानून एवं व्यवस्था बनाये रखने में अपना योगदान दे सके। अनुच्छेद 32 के अंतर्गत व्यक्ति को यह मौलिक अधिकार है कि वह अपने मौलिक अधिकार को लागू करने के लिए संविधान उपचार के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय के पास जा सके। उच्च न्यायालय संवैधानिक उपचारों की याचिका की सुनवायी से मना कर सकता है।

4.7 सारांश

मूल अधिकारों को संविधान के भाग 3 में रखा गया है। ये अधिकार मानव के विकास के लिए मूलभूत शर्तें है। ये अधिकार सभी व्यक्तियों को बिना किसी भेदभाव के स्वतंत्रता, समानता, सुरक्षा और सम्मान प्रदान करते हैं। ये अधिकार न्यायोचित है। भारत में, इन अधिकारों को 19वीं शताब्दी में संविधान में इनकी महत्ता के कारण संविधान में शामिल किया गया। मूल ढाँचा सिद्धांत के अंतर्गत मूल अधिकार संविधान के मूल ढाँचे को इंगित करते हैं। इन्हें परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। न्यायालय मूल अधिकारों को रिट के माध्यम से लागू करवाता है। यह अधिकार बहुत महत्वपूर्ण है, जो भारत के किसी भी नागरिक को सुरक्षा और आज़ादी देता है।

4.8 उपयोगी संदर्भ

बसु, दुर्गा दास (2004) भारत के संविधान का परिचय, वधवा, नागपुर।

चौवे, सिवानी किंकर (2009) भारत के संविधान का निर्माण एवं कार्य, नई दिल्ली, एन. बी. टी.।

ग्रेनविल, ऑस्टन (2012) भारतीय संविधान, राष्ट्र की आधारशिला, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

खोसला, माधव (2012) भारतीय संविधान, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

स्रकार, सुमित (1983) आधुनिक भारत 1885—1947, नई दिल्ली, मैक्मिलन,

4.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) राष्ट्रमंडल विधेयक 1925 ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता, विवेक की स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, कानून के समक्ष समानता जैसे विचारों की नींव रखी । इस विधेयक ने प्राथमिक शिक्षा, मार्गों का समान प्रयोग करना, न्याय प्रक्रिया तथा अन्य व्यवसाय के स्थानों की माँग की।

2) नेहरु रिपोर्ट 1928 में तैयार की थी, इसके अध्यक्ष मोतीलाल नेहरु थे। इसका कार्य था भारत के संविधान के मसौदे को तैयार करना। इस समिति ने भारतीय नागरिकों के लिए मूल अधिकारों की बात की जिसमें अल्पसंख्यकों के अधिकार भी शामिल थे।

सप्रू रिपोर्ट ने दो महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किये थे। (i) न्यायोचित अधिकार एवं गैर–न्यायोचित अधिकारों की बीच अंतर बताना तथा (ii) अल्पसंख्यकों की बात करना।

अभ्यास प्रश्न 2

1) छः प्रमुख मौलिक अधिकार इस प्रकार है – (i) समानता का अधिकार (ii) स्वतंत्रता का अधिकार (iii) शोषण के विरूद्ध के अधिकार (iv) धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (v) संस्कृति एवं शिक्षा का अधिकार (vi) तथा संविधानिक उपचारों का अधिकार

2) मूल ढाँचा सिद्धांत – यह सिद्धांत संविधान की मूल भावना को इंगित करता है। इसमें मूल अधिकार भी शामिल है। इन्हें 1973 में केशवानंद भारती केस से प्रतिपादित किया गया था।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 5 राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत*

संरचना

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 नीति निर्देशक सिद्धांतों की उत्पत्ति

5.3 नीति निर्देशक सिद्धांतों में संशोधन

5.4 नीति निर्देशक सिद्धांतों का क्रियान्वयन

5.5 नीति निर्देशक सिद्धांतों की सीमाऐं

5.6 नीति निर्देशक सिद्धांत एवं मूल अधिकार : एक तुलना

5.7 सारांश

5.8 उपयोगी संदर्भ

5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

यह इकाई राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों से संबंधित है। यह इन सिद्धांतों की उत्पत्ति, विशेषताऐं तथा सीमाओं की जानकारी देती है जो कि हमारे संविधान में रेखांकित है। इस इकाई के पढ़ने के पश्चात् आप यह जान पायेंगे–

- राज्य नीति निर्देशक सिद्धांतों की उत्पत्ति;
- राज्य नीति निर्देशक सिद्धांतों का वर्गीकरण;
- नीति निर्देशक सिद्धांतों का संशोधन;
- नीति निर्देशक सिद्धांतों एवं मूल अधिकारों में तुलना; और
- नीति निर्देशक सिद्धांतों की सीमाएं।

5.1 प्रस्तावना

आपने इकाई संख्या 4 में मूल अधिकारों के बारे में पढ़ा है। जो कि न्यायोचित है। आप इस इकाई में गैर न्यायोचित अधिकारों अर्थात् नीति निर्देशक सिद्धांतों के बारे में पढेंगे। जैसा कि आप इकाई में पढ़ेंगे, न्यायोचित एवं गैर–न्यायोचित अधिकारों में अंतर है। मूल अधिकारों को न्यायालय द्वारा बहाल किये जाते हैं यदि उनका उल्लंघन हुआ हो तो जबकि नीति निर्देशक सिद्धांतों को न्यायालय द्वारा बहाल नहीं किया जा सकता है यदि राज्य उन्हें लागू न करे तो। मूल अधिकार उदारवादी लोकतंत्र पर आधारित है जबकि नीति निर्देशक सिद्धांत कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के सिद्धांतों पर आधारित है। नीति निर्देशक सिद्धांतों को संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 36 से 51 के बीच रखा गया है। इनका मुख्य उद्देश्य सामाजिक एंव आर्थिक विकास प्राप्त करना है, सभी वर्गों के लिए ताकि एक समतापूर्वक समाज की स्थापना हो सके। ग्रेनविल ऑस्टिन के अनुसार, नीति निर्देशक सिद्धांत संविधानिक लक्ष्यों को हासिल करने में सहायक है तथा सभी को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय प्रदान करने में सहायक है।

---

*डा. दिव्या रानी, अकादमिक ऐसोसियेट, राजनीति विज्ञान, इग्नू, नई दिल्ली

5.2 राज्य नीति निर्देशक सिद्धांतों की उत्पत्ति

आपने इकाई संख्या 4 में पढ़ा हो कि मूल अधिकारों को संविधान में संविधान सभा की अधिकारों की उप–समिति के सुझावों के बाद शामिल किया गया था। इस उप–समिति ने मूल अधिकारों के अलावा नीति निर्देशक सिद्धांतों पर भी सुझाव दिया था। संविधान सभा में इस बात पर काफी बहस हुई थी कि अधिकारों को दो भागों में बाँटा जाए मूल अधिकार एवं नीति निर्देशक सिद्धांत। नीति निर्देशक सिद्धांत राज्य को दिशा निर्देश देते हैं कि वह विभिन्न वर्गों के लिए कल्याणकारी नीतियों शुरू करे। ग्रेनविल के अनुसार, नीति निर्देशक सिद्धांतों को बनाने में चार लोगों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। बी. एन. राव, ए. के. अय्यर, बी. आर. अम्बेडकर तथा के. टी. साह। इनमें से बी. एन. राव सबसे अधिक प्रभावशाली थे।

नीति निर्देशक सिद्धांतों की उत्पत्ति कराची प्रस्ताव के बाद हुई थी और 1920 में भारत में सामाजिक एवं राष्ट्रीय विचारों के प्रादुर्भाव के कारण हुई थी। जैसा कि आपने इकाई 5 में पढ़ा होगा कि सप्रू समिति ने अधिकारों को दो भागों में बाँटने का सुझाव दिया था एक न्यायोचित तथा दूसरा गैर–न्यायोचित। यहाँ तक कि अधिकारों की उप–समिति ने भी इन सुझावों को सहमति दी थी। भारत में नीति निर्देशक सिद्धांतों पर चर्चा के समय, समाज में सामाजिक और आर्थिक विकास के प्रावधानों को शामिल करने में राज्य की भूमिका का महत्वपूर्ण योगदान था। नीति निर्देशक सिद्धांतों को आयरलैंड के संविधान से ग्रहण किया गया था। ग्रेनविल ऑस्टिन के शब्दों में उन्होंने संविधान सभा के ज्यादातर सदस्यों के ध्यान को आकर्षित किया था। हिन्दुवादी दृष्टिकोण एवं गाँधीवादी विचार भी इन सिद्धांतों को संविधान में शामिल करने को प्रभावित किया था। ये प्रावधान लोगों के सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक विकास के लिये महत्वपूर्ण थे। काफी गंभीर चर्चा के बाद संविधान सभा ने इन्हें संविधान के भाग चार में शामिल कर लिया था। इन नीति निर्देशक सिद्धांतों की सूची नीचे दी गयी है।

राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत भाग– 4

अनुच्छेद सं.	विषय
36	राज्य की परिभाषा
37	इस भाग में शामिल सिद्धांतों को लागू करना
38	राज्य लोगों की भलाई के लिए सामाजिक व्यवस्था की व्यवस्था करे
39	राज्य द्वारा कुछ नीति–सिद्धांतों को अपनाना
39 ए	समान न्याय तथा मुफ्त कानूनी सहायता
40	ग्राम पंचायतो को संगठित करना
41	कार्य करने का अधिकार, शिक्षा का अधिकार तथा कुछ मामलों में लोक सहायता
42	काम करने के लिए मानवीय स्थिति का प्रावधान तथा मातृत्व राहत का प्रावधान
43	जीवनयापन के लिए मजदूरों को मजदूरी देना
43ए	उद्योगों के प्रबंधन में मजदूरों की भागेदारी

43 बी	सहयोगी समाज को प्रोन्नत करना
44	सभी नागरिकों के लिए समान नागरिक संहिता
45	बाल देखभाल को प्रोन्नत करना तथा छः वर्ष से कम के बच्चों को शिक्षा का प्रावधान करना।
46	कमजोर वर्गों, अनुसूचित–जातियों तथा जन जातियों के हितों की रक्षा करना
47	राज्य का यह दायित्व है कि वह लोगों के स्वास्थ्य में सुधार करे तथा जीवन यापन पोषण के स्तर में सुधार करे।
48	पशुपालन एवं कृषि को संगठित करना
48 ए	पर्यावरण की रक्षा करना एवं जंगली जीवन एवं वनों की सुरक्षा करना
49	राष्ट्रीय महत्व के स्थानों एवं स्मारकों की रक्षा करना
50	न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग करना
51	अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा कायम करना।

दुर्गादास बसु ने इन सिद्धांतों को तीन भागों में वर्गीकृत किया है। प्रथम, कुछ ऐसे आदर्श जिन्हें संविधान सभा के सदस्यों ने महसूस किया कि इन्हें हासिल किया जा सकता है। ये आदर्श मुख्य रूप में आर्थिक थे। दूसरा, कुछ निर्देश विधायिका एवं कार्यपालिका के लिये ताकि वे अपने अधिकारों का उपयोग ठीक से कर सके। तीसरा, नागरिकों के अधिकारों के लिए अर्थात् ये मूल अधिकारों से अलग है जिन्हें न्यायालय भी लागू नहीं कर सकता है। लेकिन इन्हें राज्य द्वारा विधायी एवं प्रशासनिक नीतियों से लागू किया जा सकता है।

भाग 4 में दिये गये अनुच्छेदों के अलावा संविधान में कुछ अन्य अनुच्छेद है जो कि राज्य के लिए नीतियां बनाने को अधिकृत है। ये अनुच्छेद 335, 350 ए, तथा 351 हैं। अनुच्छेद 335 के अनुसार अनुसूचित जाति एवं जनजाति के सदस्यों को ध्यान में रखते हुए प्रशासन को उचित कार्य करने चाहिये। राज्य के मामलों में सेवाओं से संबंधित नियुक्तियों भी करनी चाहिए। अनुच्छेद 350 ए यह सुझाव देता है कि सभी स्थानीय प्रशासन अपनी मातृभाषा को बच्चों की प्राथमिक शिक्षा के लिए अनिवार्य बनाये विशेषकर जो भाषाई अल्पसंख्यक समूह के बच्चे है उनके लिये। अनुच्छेद 351 के अंतर्गत संघ हिंदी भाषा के विस्तार को प्रोन्नती देगा ताकि यह सभी के लिये एक माध्यम बन सके और भारत की संस्कृति को बनाये रख सके।

5.3 नीति निर्देशक सिद्धांतों में संशोधन

नीति निर्देशक सिद्धांतों में कुछ नये प्रतिमान जोड़े गये हैं संविधान संशोधन के माध्यम से। इन संशोधनों के माध्यम से इन सिद्धांतों को और अधिक समाज कल्याण की नीतियों को शामिल करने में सहायता मिली है। 42 वें संशोधन 1976 के तहत् चार नये विषय जोड़े गये है ताकि राज्य बच्चों के स्वास्थ्य में विकास कर सके (अनुच्छेद 39), गरीबों को मुफ्त कानूनी सहायता उपलब्ध करा सके ताकि समान न्याय मिल सके (अनुच्छेद 39ए) उद्योगों के प्रबंधन में मजदूरों की भागीदारी (अनुच्छेद 43ए) तथा पर्यावरण की रक्षा, वनों एवं जंगली जीवन की सुरक्षा (अनुच्छेद 48 ए). 44वें संशोधन के द्वारा 1978 में अनुच्छेद 38 को जोड़ा

गया जिसमें राज्य को आय की असमानता को कम करना पद तथा सुविधाओं एवं अवसरों को बढ़ाने का कार्य करना शामिल था। 2002 में 86वें संशोधन के द्वारा अनुच्छेद 45 के विषय में भी संशोधन किया गया जिसमें राज्य को सभी बच्चों की देखभाल करना तथा छः वर्ष से कम की आयु के बच्चों के लिए शिक्षा व्यवस्था करना था शिक्षा मूल अधिकारों के अंतर्गत अनुच्छेद 21 ए में शामिल किया गया। 2011 में 97 वें संशोधन के माध्यम से अनुच्छेद 43 को जोड़ा गया जिसमें राज्य को संघों के निर्माण, स्वायत्त संस्थाओं के कार्य, तथा व्यावसायिक प्रबंध संस्थानों के नियंत्रण को बढ़ाने की बात कही गयी।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) अधिकारों की उप–समिति क्या थी?

....

....

....

....

....

2) नीति निर्देशक सिद्धांतों की उत्पत्ति के बारे में विस्तृत चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

5.4 नीति निर्देशक सिद्धांतों का क्रियान्वयन

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, केन्द्र एवं राज्य सरकारों ने इन सिद्धांतों के अनुसार कार्य किया है तथा कई प्रकार की योजनाएं एवं कार्यक्रम भी लागू किये है एवं कई प्रकार के आयोगों का भी गठन किया गया है। योजना आयोग (जिसे अब नीति आयोग) बनाया गया जो अपने पंच–वर्षीय योजनाओं के अंतर्गत सामाजिक, आर्थिक न्याय एवं समानता लाने का प्रयास करती रही है। कई राज्यों में भूमि सुधार लागू किया जिससे जमींदारी प्रथा को खत्म किया गया, कास्तकारी व्यवस्था में सुधार किया गया, भूमि पर कब्जे को समाप्त किया गया, सामूहिक खेती जैसे कार्यक्रमों की शुरूआत हुई जिसने ग्रामीण समाज में कृषि असमानता को दूर किया। सरकार ने वंचितों तबकों के लिये कई प्रकार के कदम उठाये इनमें गरीबों के हितों की रक्षा करना भी शामिल था, मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी देना, ठेके पर मजदूरों की रक्षा करना, गरीबों को मुफ्त कानूनी सहायता प्रदान करना, बाल शोषण को समाप्त करना, बंधुआ मजदूरी को समाप्त करना, तथा औद्योगिक विवादों का निपटारा करना इत्यादि शामिल थे। महिलाओं की सहायता भी इन कदमों में शामिल थे, मातृत्व लाभ प्रदान करना, समान मजदूरी तथा महिलाओं के हितों की रक्षा करना इत्यादि। सरकार ने वन्य जीवन की सुरक्षा के लिए भी कानून बनाया तथा पर्यावरण की रक्षा के लिए केन्द्र और

राज्य प्रदूषण बोर्ड की भी स्थापना की। सरकार ने खादी एवं ग्राम उद्योग मंडल का भी गठन किया तथा सूती उद्योग के विकास के लिए हैन्डलूम एवं हतकरघा बोर्ड का भी गठन किया। सरकार ने ऐतिहासिक इमारतों एवं प्राचीन स्मारकों के संरक्षण के लिए भी कानून बनाये तथा राष्ट्रीय महत्व के स्थालों का भी संरक्षण किया गया। अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के हितों की रक्षा के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया। इन्हें सरकारी नौकरियों, राजनीतिक संस्थाओं में आरक्षण की व्यवस्था की गयी ताकि इन्हें सामाजिक न्याय प्रदान किया जा सके तथा इन वर्गों के अधिकारों के लिए कई प्रकार के कानून बनाये गये ताकि सामाजिक उत्पीड़न को रोका जा सके। ग्राम पंचायतों के गठन तथा इनमें इन वर्गों को आरक्षण देकर उनकों सशक्तिकरण किया गया। कई प्रकार के कार्यक्रम जैसे, सामुदायिक विकास कार्यक्रम, पहाड़ी क्षेत्र विकास कार्यक्रम, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, स्वीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, रोजगार गारन्टी कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन जैसे कार्यक्रमों की शुरूआत की गयी जिसने लोगों के सामाजिक एवं आर्थिक समावेश में महत्पवूर्ण भूमिका अदा की।

5.5 नीति निर्देशक सिद्धांतों की सीमाऐं

सबसे प्रमुख सीमा इन सिद्धांतों की यह है कि राज्य उन्हें कानूनी तौर पर लागू करने को बाध्य नहीं है। इसके वाबजूद कि राज्य की यह नैतिक जिम्मेदारी है कि इन्हें लागू करे क्योंकि इन्हें संविधान में शामिल किया गया है। ये सिद्धांत न्यायोचित नहीं होने की वजह से राज्य पर ज्यादा दवाब नहीं होता कि वंचित वर्गों के लिए कार्य करे तथा हमेशा विशिष्ट वर्गों के दवाब में कार्य करता है। संविधान सभा के कुछ सदस्यों ने नीति निर्देशक सिद्धांतों की सीमाओं को रेखांकित किया था। खासकर उनकी गैर न्यायोचित प्रकृति को लेकर। के. टी. साह ने टिप्पणी की कि ये सीमाऐं नीति निर्देशक सिद्धांतों को ''पवित्र इच्छाऐं'' बनाऐंगी। टी. टी. कृष्णामचारी ने इन्हें ''भावनाओं का सच्चा कचरापात्र'' कहकर संबोधित किया। के. संतानम संविधान सभा के एक सदस्य ने कहा कि ये सिद्धांत केन्द्र एवं राज्यों के बीच विवाद पैदा कर सकते है, तथा ये प्रधानमंत्री एवं राष्ट्रपति, राज्यपाल एवं मुख्यमंत्री के बीच दिशा निर्देश, अध्यादेश सहमति, एवं अन्य समस्याओं के संबंध में विवाद पैदा कर सकते हैं।

5.6 नीति निर्देशक सिद्धांत और मूल अधिकार : एक तुलना

मूल अधिकारों को इकाई संख्या 4 में अध्ययन करने एवं नीति निर्देशक सिद्धांतों को इस इकाई में अध्ययन करने के बाद यह काफी दिलचस्प होगा इन दोनों के बीच तुलना करना। दोनों के बीच समानता एवं असमानताऐं है। इन दोनों का समान लक्ष्य है, अधिकारों की रक्षा करना, जन कल्याण या सामाजिक क्रांति। ग्रेनविल ऑस्टिन ने इन दोनों को ''संविधान की अंतर्रात्मा'' कहा था। ये दोनों समान परिस्थितियों में उभर कर समाने आये थे। दोनों की जड़ स्वतंत्रता संघर्ष में समाहित है। दोनों की उत्पत्ति का समय एवं परिस्थितियां भी एक सी ही है। 1920 से समाजवाद के विचार काफी लोकप्रिय हुए थे और कॉंग्रेस ने भी भारतीयों को अधिकार देने की माँग को जोर–शोर से उठाया। इसके बाद संविधान सभा में अधिकारों की उप–समिति का गठन किया गया। जैसा कि आप पढ़ चुके हैं इस उप–समिति ने ही इन दोनों को संविधान में शामिल करने का सुझाव दिया था। वास्तव में संविधान सभा में मूल अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के ऊपर बहुत कम असहमति थी। मतभेद केवल तकनीकी तौर पर था। फिर भी, दोनों के बीच समान के साथ–साथ असमानताऐं भी मौजूद है। मूल अधिकार नकारात्मक है जबकि निर्देशक सिद्धांत सकारात्मक है। अर्थात मूल अधिकार राज्य को अपने अधीन इन अधिकारों पर

अतिक्रमण करने से मना करता है। इसका यह भी अर्थ है कि निर्देशक सिद्धांत राज्य से लोगों के लिए कुछ लाभ लेने या प्रदान करने की बात करता है। मूल अधिकार न्यायसंगत है जबकि निर्देशक सिद्धांत गैर न्यायसंगत है। लेकिन ऑस्टिन यह तर्क देते है कि चाहे निर्देशक सिद्धांत गैर न्यायसंगत हो फिर भी देश की शासन व्यवस्था का मूल तत्व है। मूल अधिकार व्यक्तियों के कल्याण एवं उनके व्यक्तिगत एवं राजनीतिक अधिकार प्रदान करते हैं जबकि निर्देशक सिद्धांतों का संबंध संपूर्ण समुदाय के कल्याण के बारे में है। मूल अधिकारों को किसी भी कानून की जरूरत नहीं है उनके लागू होने के लिये लेकिन निर्देशक सिद्धांतों को लागू करने के लिए कानून बनाने की जरूरत है।

मूल अधिकारों की न्यायोचितता एवं उनका लागू किया जाना उनको प्राथमिकता देता है और मूल अधिकार एवं नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच विवाद में मूल अधिकारों का पलड़ा भारी होता है। फिर भी नीति निर्देशक सिद्धांत को लागू करना भी राज्य की नैतिक जिम्मेदारी मानी जाती है। इसमें इनके लिए कानूनी एवं राजनीतिक, दोनों असमंजय की स्थिति पैदा कर दी हैं। मूल अधिकार नीति निर्देशक सिद्धांतों से सर्वोच्च है ऐसे विवाद को 1951 में चम्पकम दोराईराजन के केस में देखने को मिला। इस केस में सर्वोच्च न्यायालय ने यह फैसला सुनाया कि यदि इन दोनों के बीच विवाद हो तो मूल अधिकारों को तरजीह दी जायेगी। बाद में 1967 के गोलकनाथ केस एवं 1973 के केशवानंद भारती केस ने भी इनकी स्थिति को और मजबूत बना दिया। नीति निर्देशक सिद्धांतों की तुलना में केशवानंद भारती केस में मूल अधिकारों को संशोधित भी नहीं किया जा सकता । मूल अधिकार निर्देशक सिद्धांतों से सर्वोच्च है इसका समाधान 1980 में मिनरवा मिल केस में हो गया था। इस केस में सर्वोच्च न्यायालय का एक महत्वपूर्ण नजरिया सामने आया खासकर इन दोनों के बीच संबंधों का। कोर्ट ने यह माना कि भारतीय संविधान का मूल आधार इनके बीच संतुलन बैठाना है। इन दोनों की प्रतिबध्यता सामाजिक क्रांति की तरफ है। ये दोनों एक रथ के दो पहियों की तरह है जो कि एक के बिना दूसरा अधूरा है। यदि इनमें से किसी एक को ज्यादा प्राथमिकता दी तो इससे संविधान की सद्भावना को ठेस पहुँचेगी। सद्भावना एवं संतुलन दोनों संविधान की प्रमुख विशेषताऐं एवं प्रमुख आधार भी है। नीति निर्देशक सिद्धांतों के लक्ष्य को बिना मूल अधिकारों के साथ छेड़छाड़ करके भी प्राप्त किया जाना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) मूल अधिकार एवं नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच तुलना कीजिए।

....

....

....

....

2) नीति निर्देशक सिद्धांतों की सीमाऐं क्या हैं?

....

....

....

....

5.7 सारांश

नीति निर्देशक सिद्धांतों का प्रावधान राज्यों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक नीतियां बनाने के लिये किया गया है ताकि लोगों को सशक्त बनाया जा सके। इनका मूल उद्देश्य एक समतामूलक समाज की स्थापना करना है। ये मूल अधिकारों से अलग है क्योंकि ये गैर–न्यायसंगत है जबकि मूल अधिकार न्यायसंगत है। नीति निर्देशक सिद्धांतों का विचार कराची प्रस्ताव के बाद सामने आया था जिसमें 1920 से समाजवाद और राष्ट्रवाद के आदर्शों की भी बड़ी भूमिका थी। आयरलैण्ड के संविधान हिंदू आदर्श तथा गाँधीवादी दर्शन भी इन सिद्धांतों पर प्रभावित किये थे। सप्रू समिति ने इन दोनों के बीच अंतर करने का सुझाव दिया था। न्यायसंगत तथा गैर–न्यायसंगत अधिकारों की उपसमिति ने भी इन दोनों के बीच अंतर बताया था। संविधान सभा ने अधिकारों की उप–समिति के सुझावों को मंजूर करके तथा उन पर बहस करके नीति निर्देशक सिद्धांतों को संविधान में शामिल कर लिया था। इन्हें संविधान के भाग चार में अनुच्छेद 36 से 51 के बीच रखा गया है। 42वें, 43वें, 86वें, और 97वें संशोधन के बाद इनके क्षेत्र की और अधिक विस्तृत किया गया है। यदि हम नीति निर्देशक सिद्धांतों को न्यायोचित की अवधारणा के साथ बाहर रख दे ंतो ये सामाजिक कल्याण के लिये अच्छा नहीं होगा।

5.8 उपयोगी संदर्भ

ग्रेनविल, आस्टिन (1966), भारतीय संविधान, राष्ट्र की आधारशिला, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

बसु, डी. डी. (1960), भारतीय संविधान का परिचय, कलकत्ता, एस.सी. सरकार एण्ड संस प्राइवेट लिमिटेड।

चौबे, सिवानी किंकर (1960), भारतीय संविधान का निर्माण और कार्यप्रणाली, नई दिल्ली, एन.बी.टी.

लक्ष्मीकांत, एम (2004), भारतीय राजनीति, नई दिल्ली, मैक्ग्रा हिल, एडूकेशन।

5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) अधिकारों की उप–समिति संविधान सभा की एक उप–समिति थी जिसने मूल अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों पर अपने सुझाव दिये थे। इसके सुझावों के ऊपर ही मूल अधिकारों को न्यायोचित तथा नीति निर्देशक सिद्धांतों को गैर–न्यायोचित बनाया गया था।

2) नीति निर्देशक सिद्धांतों की उत्पत्ति का श्रेय 1931 के कराची प्रस्ताव को जाता है जिसने 1920 के वातावरण के बाद के समाजवादी आदर्शों एवं सिद्धांतों को अपनाया था। इसके बाद इस सिद्धांतो को अपनाया गया था। सप्रू समिति ने इन दोनों के बीच अंतर किया था। मूल अधिकार न्यायसंगत तथा निर्देशक सिद्धांत गैर–न्यायसंगत होना। इन सुझावों को अधिकारों की उप–समिति ने भी माना। इनको अंत में स्वीकार कर लिया गया तथा भाग चार में शामिल कर लिया गया।

अभ्यास प्रश्न 2

1) मूल अधिकार एवं नीति निर्देशक सिद्धांत दोनों में समानताऐं एवं असमानताऐं भी है। समानताऐं इन दोनों का लक्ष्य एक होना है जैसे कि अधिकारों की रक्षा करना, जन कल्याण, सामाजिक, क्रांति इत्यादि। 1920 के बाद समाजवाद के सिद्धांत काफी लोकप्रिय हुए थे, जिसे संविधान सभी की उप–समिति ने भी सिफारिश की थी। इन दोनों के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर है न्यायोचित एवं गैर–न्यायोचित। मूल अधिकार न्यायोचित है जबकि नीति निर्देशक सिद्धांत गैर–न्यायोचित है।

2) नीति निर्देशक सिद्धांत राज्य पर कानूनी तौर पर बाध्य नहीं है, हालांकि इनको लागू करना राज्य की नैतिक जिम्मेदारी है। राज्य के ऊपर जनता का दवाब रहता है कि इन्हें लागू करे या न करे। के. टी. साह के अनुसार ये सिद्धांत 'पवित्र इच्छाऐं है जबकि टी. टी. कृष्णामचारी ने इन्हें ''लोगों की भावनाओं का कचरापात्र'' बताया था।

इकाई 6 मौलिक कर्तव्य*

संरचना

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 संविधान में मौलिक कर्तव्यों का प्रवेश

6.3 मौलिक कर्तव्यों की गैर–न्यायोचित धारणा

6.4 मौलिक कर्तव्यों का महत्व

6.5 सारांश

6.6 उपयोगी संदर्भ

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप यह जान पायेंगे :–

- मौलिक कर्तव्यों की प्रकृति एवं उनका अर्थ;
- संविधान में मौलिक कर्तव्यों का समावेश; और
- मौलिक कर्तव्यों का महत्व।

6.1 प्रस्तावना

मौलिक कर्तव्य एक ऐसी धारणा है जो किसी व्यक्ति के अंदर कुछ करने के लिए प्रतिबद्ध एवं उत्प्रेरित करती है। यह उस व्यक्ति के अंदर नैतिक दायित्व की भावना पैदा करती है। व्यक्ति को अपने निजी जीवन में या प्रतिदिन कुछ कार्य अवश्य करने चाहिए उन्हें विभिन्न प्रकार के कर्तव्यों को पूरा करना चाहिए। ये कार्य चाहे परिवार से संबंधित हो या अपने कार्य क्षेत्र से या फिर आधुनिक राज्य से ही संबंधित हो।

प्राचीन रोमन दार्शनिक सिसरों ने भी कर्तव्य के बारे में अपनी पुस्तक 'दे ओफिफसिस' अर्थात् कर्तव्य पर चर्चा की है। इसमें उन्होंने बताया कि कर्तव्य चार विभिन्न स्रोतों से आ सकता है। जैसे (1) बुद्धि या विवेक से, (2) न्याय से, (3) साहस से तथा (4) संयम से। आपने इकाई 4 के अंदर मौलिक अधिकारों के बारे पढ़ा होगा। ये ठीक प्रकार से महसूस किये जा सकते है यदि नागरिक अपने कर्तव्यों का ठीक प्रकार से निर्वहन करे। इस प्रकार मौलिक अधिकार एवं मौलिक कर्तव्य दोनों एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। यदि कोई व्यक्ति अपना दायित्व ठीक से निभाये तभी दूसरे के अधिकार सुरक्षित रह सकते हैं। वास्तव में, कोई भी व्यक्ति अपने दायित्वों को ठीक से निभाये बिना अपने अधिकारों का लाभ नहीं उठा सकते हैं। अन्य शब्दों में, यदि व्यक्ति अपना दायित्व या कर्तव्य पूरा करे, तभी वह अपने अधिकारों को प्राप्त कर सकता है। यदि राज्य व्यक्तियों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करता है तो व्यक्तियों से भी यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने कर्तव्यों का ठीक से पालन करें। कई देशों ने अपने संविधान में मौलिक कर्तव्यों को शामिल किया है। उदाहरण के तौर पर, पूर्व सोवियत संघ, चीनी गणराज्य, भारत, पोलैंड, अल्बेनिया,

*जयंत देबनाथ, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान संकाय, मृनालिनी दत्ता महाविद्यापीठ, कोलकता

चेकोस्लोवाकिया, नीदरलैण्ड, युगोस्लाविया, लोकतांत्रिक वियतनामी गणराज्य, जापान तथा इटालियन गणराज्य शामिल है। पूर्व सोवियत संघ प्रथम देश था जिसने अपने संविधान में मौलिक कर्तव्यों को शामिल किया था।

6.2 संविधान में मौलिक कर्तव्यों का प्रवेश

प्रारंभ में, संविधान में मौलिक कर्तव्यों का प्रावधान नहीं था। लेकिन, अपवाद स्वरूप, अनुच्छेद 33 में कुछ मौलिक कर्तव्यों का प्रावधान था। इस अनुच्छेद के अनुसार सैनिक बलों एवं पुलिस को अनुशासन का पालन करना जरूरी था तथा उन्हें अपने कर्तव्यों का ठीक से पालन करना भी आवश्यक था, हालांकि संविधान में मौलिक कर्तव्य इसका हिस्सा नहीं था।

हालाँकि संविधान के 42वें एवं 86वें संविधान संशोधन के अंतर्गत संविधान में इन मौलिक कर्तव्यों को शामिल करने का प्रावधान किया गया। 42वें संविधान संशोधन जो कि 1976 में लाया गया था, संविधान में एक अलग से भाग जोड़ा गया जिसमें मौलिक कर्तव्यों से संबंधित अनुच्छेद शामिल किये गये थे। 42वां संविधान संशोधन अधिनियम आपातकाल के दौरान 1975–1977 पारित किया गया था। इस संशोधन के अनुसार सभी व्यक्तियों को कुछ मौलिक कर्तव्यों का पालन करना आवश्यक था। चाहे वे सैनिक हों या पुलिस सबको कुछ न कुछ मौलिक कार्य करना, आवश्यक था। 2002 में 86वें संविधान संशोधन ने सभी बच्चों जिनकी उम्र 6 से 14 वर्ष के बीच में थी, उनके अभिभावकों को उन्हें शिक्षा प्रदान कराने का मौलिक कर्तव्य हैं। इस संशोधन ने ही बच्चों की शिक्षा को मौलिक अधिकार का दर्जा प्रदान किया। इन संशोधनों के कारण ही हमारे संविधान के भाग चार ए में अनुच्छेद 51ए में वर्णित मौलिक कर्तव्य अनुच्छेद 29 1 में सार्वभौम मानव अधिकारों के समतुल्य पाया गया है। इसके अनुसार सभी नागरिकों का यह दायित्व है कि उन्हें कुछ कर्तव्यों का पालन करना चाहिये तभी जाकर उनका व्यक्तिगत विकास संभव है। 42वें एवं 86वें संविधान संशोधन के पारित होने के पश्चात् भारत के नागरिकों को 11 मौलिक कर्तव्य दिये गये हैं। ये मौलिक कर्तव्य इस प्रकार है :–

1) संविधान का सम्मान करें तथा इसके आदर्श एंव संस्थाओं का सम्मान करें, राष्ट्रीय ध्वज एवं राष्ट्रगान का आदर करें।

2) राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष के आदर्श विचारों का अनुसरण करें।

3) भारत की सप्रभुता, एकता एवं अखंडता की रक्षा करें।

4) देश की रक्षा करे तथा जब जरूरत हो तब देश की सेवा करने के लिए हमेशा तत्पर रहे।

5) भारत की जनता के बीच भाईचारा बनाये रखे तथा सभी धर्मों का सम्मान करें। आपसी सद्भाव बनाये रखे, तथा कभी भी धर्म, भाषा, क्षेत्र एवं समुदाय के नाम पर भेदभाव न करें। हमेशा महिलाओं का आदर एवं सम्मान करें।

6) हमारी बहुमूल्य संस्कृति एवं विरासत को संजोये रखें तथा इसकी कीमत को पहचानें।

7) हमारे प्राकृतिक वातावरण पर्यावरण की रक्षा करें, जैसे जंगल, झील, नदियां तथा वन्य जीवन की रक्षा करें एवं सभी प्रकार के जंगली जीवों की रक्षा करें।

8) वैज्ञानिक सोच, मानवीयता, तथा अपने अंदर चेतना का विकास करें।

9) हमेशा सार्वजनिक सम्पत्ति की रक्षा करें तथा हिंसा न करें।

10) हमेशा उच्च विचार रखें जिससे कि हमारा राष्ट्र सदैव ऊंचे स्तर तक पहुंचे और राष्ट्र उन्नति को प्राप्त कर सके।

11) जो भी अभिभावक एवं संरक्षक हो, वो अपने बच्चे के लिए शिक्षा की व्यवस्था करें एवं शिक्षा के अवसर प्रदान करें विशेषकर 6 से लेकर 14 वर्ष के बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था करें।

मौलिक कर्तव्यों की प्रमुख विशेषताऐं भी हैं वो इस प्रकार हैं :–

क) मौलिक कर्तव्य सामाजिक एंव नैतिक दोनों ही प्रकृति के हैं।

ख) ये भारतीय जीवन शैली पर अधिक बल देते हैं विशेषकर भारतीय संस्कृति की रक्षा एवं उसके सम्मान की बात करते हैं।

ग) ये प्रावधान विदेशी लोगों पर लागू नहीं होते हैं केवल भारत के नागरिकों को ही इन संविधानिक कर्तव्यों का पालन करेंगे।

घ) मौलिक अधिकार एवं मौलिक कर्तव्यों में साफ अंतर है।

ड़) ये गैर–न्यायोचित एवं गैर प्रवर्तनीय है।

42वां संशोधन स्वर्ण सिंह समिति रिपोर्ट की सिफारिशों के आधार पर बनाया गया था। स्वर्ण सिंह समिति का गठन इंदिरा गांधी सरकार ने 1976 में किया था । सरदार स्वर्ण सिंह इस समिति के अध्यक्ष थे। इस समिति ने संविधान में एक अलग भाग जोड़ने की सिफारिश की था जिसका संबंध मौलिक कर्तव्यों से था। इस समिति की सिफारिशों के आधार पर ही सरकार ने संविधान में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन किये जिसे हम 42वें संविधान संशोधन के रूप में जानते हैं। यह संशोधन 3 जनवरी 1979 से लागू किया गया। स्वर्ण सिंह समिति ने भारत के नागरिकों के लिए आठ प्रकार के कर्तव्यों का सुझाव दिया जिसे संविधान में शामिल किया गया। ये आठ प्रकार के कर्तव्य इस प्रकार हैं –

1) संविधान एवं कानून की रक्षा एवं उनकी पालना करना

2) राष्ट की संप्रभुता को बनाये रखना तथा ऐसे कार्य करना जिसे कि देश की एकता एवं अखंडता मजबूत हो सके।

3) संविधान में उल्लेखित जनतांत्रिक संस्थाओं का सम्मान करना तथा ऐसे कार्य नहीं करना जिससे कि इसके सम्मान और सत्ता को ठेस पहुंचे।

4) देश की रक्षा करना तथा जरूरत पड़ने पर राष्ट्रीय सेवा के लिए तत्पर रहना यहां तक कि सैनिक सेवा के लिए भी तैयार रहना।

5) साम्प्रदायिकता को किसी भी रूप में सहन नहीं करना।

6) राज्य के नीति–निर्देशक सिद्धांतों को लागू करने में राज्य की सहायता एवं सहयोग करना तथा लोगों के लिए भलाई के कार्य करना ताकि सामाजिक एवं आर्थिक न्याय मिल सके।

7) हिंसा की निंदा करना, सार्वजनिक सम्पति की रक्षा करना तथा ऐसे कार्य न करना जिससे कि सार्वजनिक सम्पत्ति को नुकसान हो।

8) कानून के अनुसार कर अदा करना।

लेकिन कांग्रेस सरकार जिसकी अगुवाई प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी कर रही थी, उसने स्वर्ण सिंह समिति की सभी सिफारिशों एवं सुझावों को स्वीकार नहीं किया।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) संविधान में किस संशोधन के द्वारा मौलिक कर्तव्यों को शामिल किया गया था?

....

....

....

....

....

2) पर्यावरण की रक्षा के लिए मौलिक कर्तव्यों के बारे में कुछ पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

6.3 मौलिक कर्तव्यों का गैर–न्यायसंगत होना

मौलिक कर्तव्य गैर–न्यायसंगत एवं गैर लागू करने योग्य होते है। संविधान में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जिससे कि इन्हें प्रत्यक्ष रूप से लागू किया जा सके। इसका अर्थ यह है कि यदि कोई नागरिक इन मौलिक कर्तव्यों का उल्लंघन करता है तो उन्हें न्यायालय द्वारा दंड नहीं दिया जायेगा। इस प्रकार मौलिक कर्तव्य राज्य के नीति–निर्देशक सिद्धांतों की तरह है। मौलिक कर्तव्यों को भाग तीन के अंत में नहीं रखा गया है जो कि न्यायोचित है जबकि इन्हें भाग चार (ए) में रखा गया है जो कि गैर–न्यायसंगत है। मौलिक कर्तव्यों को लागू करने के बारे में भारत अन्य देशों के मुकाबले में अलग है। कई अन्य देश जैसे कि सोवियत संघ, यूगोस्लाविया, तथा अलबेनिया के संविधानों में इन मौलिक कर्तव्यों को कानूनी रूप से लागू करने का प्रावधान है जबकि भारत में ऐसा नहीं है। जैसा कि हम पिछले भाग में पढ़ चुके है मौलिक कर्तव्यों को हमारे संविधान में स्वर्ण सिंह समिति की सिफारिशों के पश्चात् शामिल किया गया था। वी. के. आर. वी. राव ने स्वर्ण सिंह समिति रिपोर्ट की सिफारिशों की आलोचना की थी। उन्होंने इनकी इस आधार पर आलोचना की थी कि यदि इन मौलिक कर्तव्यों के उल्लंघन पर कोई कानूनी सजा नहीं है तो इन्हें लागू नहीं करवाया जा सकता है।

उनका मानना था कि लोगों में साहस एवं इच्छा शक्ति की कमी है इसलिए इनका आदर नहीं करते। इसलिए कर्तव्यों को ठीक प्रकार से आदर नहीं कर सकते जब तक कि इन्हें कानूनी तौर पर बाध्यकारी नहीं बनाया जाता। अधिकारों का कोई नैतिक आधार नहीं है, इन्हें ठीक प्रकार से लागू किया जा सकता है मौलिक कर्तव्यों के साथ में। 1998 में सर्वोच्च न्यायालय ने भारत की सरकार को एक नोटिस जारी किया जिसमें मौलिक कर्तव्यों के आदर करने की जरूरत को महसूस किया गया, इसमें सर्वोच्च न्यायालय ने भारत की सरकार से यह कहा कि सरकार के पास ऐसी कौन सी योजना है ताकि देश के नागरिकों

को इन कर्तव्यों के बारे में पढ़ाया जा सके। इस नोटिस के जवाब में, भारत सरकार ने एक समिति का गठन किया जिसके अध्यक्ष न्यायाधीश जे. एस. वर्मा थे। इस समिति को हम वर्मा समिति के नाम से भी जानते है। इ समिति का गठन 1999 में किया गया जिसका मूल उद्देश्य था मौलिक कर्तव्यों के लागू होने का परीक्षण करना तथा कुछ सिफारिशें करना जिससे कि लोगों को इनके बारे में शिक्षित किया जा सके ताकि वे इनका आदर कर सके। वर्मा समिति ने निम्नलिखित सिफारिशें की थी :—

1) मौलिक कर्तव्य नागरिकों के सार्वजनिक जीवन में बदलाव लाऐंगे। इसलिए सभी व्यक्ति इन कर्तव्यों का पालन करें एवं उनका आदर करें।

2) सार्वजनिक पदों पर आसीन सभी व्यक्ति व्यक्तिवादी या भाई—भतीजावाद से दूर रहें। उनकी प्राथमिकता व्यक्तिगत हितों की बजाय सार्वजनिक हित होना चाहिए।

3) सार्वजनिक पदों पर कार्य करने के लिए ईमानदारी सबसे बड़ा सिद्धांत होता है।

4) सार्वजनिक पदों पर बैठे लोग जनता के प्रति अपने कार्यों एवं निर्णयों के लिए उत्तरदायी होने चाहिए।

5) उन्हें अपने निर्णयों एवं कार्यों के लिए हमेशा खुला रहना चाहिए।

6) सार्वजनिक पदों पर आसीन लोगों को ऑफिस के अंदर हमेशा ईमानदारी कायम रखनी चाहिए।

7) सभी पदाधिकारियों को एक अच्छे लीडर की भूमिका निभायी चाहिए। उन्हें नेतृत्व के सारे सिद्धांतों को अपनाकर एक मिसाल कायम करनी चाहिये।

मौलिक कर्तव्य राष्ट्र एवं समाज की नींव को मजबूत बना सकते हैं। लेकिन केवल अध्यादेश इसे पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है। कानूनों को प्रभावकारी तरीके से लागू किया जाना ही मौलिक कर्तव्यों के प्रभावकारी रूप से पूरा करने के लिए आवश्यक है। यह तभी संभव है जब सभी नागरिक इन कर्तव्यों के प्रति पूरी तरह से प्रतिबद्ध एवं उनका पूरी तरह से आदर करें। लोगों में इन कर्तव्यों के प्रति जागरूकता लाने के लिए वर्मा समिति ने कुछ प्रचलित कानूनों की पहचान की है ताकि इनका सही प्रकार से क्रियान्वयन हो सके। इनका विवरण इस प्रकार है :—

1) **1951 का जन प्रतिनिधि कानून** :— इस कानून के अनुसार यदि कोई संसद सदस्य या विधानसभा सदस्य किसी भी भ्रष्टाचार जैसी कार्य में अपने आपको लिप्त पाया गया तो उसे अपनी सदस्यता से निरस्त किया जा सकता है।

2) **1967 का गैर—कानूनी कार्यप्रणाली संरक्षण अधिनियम** :— राष्ट्र की सीमा के अंदर कोई भी साम्प्रदायिक संगठन किसी भी प्रतिबंधित कार्य को न करे जिससे कि समाज में अशांति एवं असुरक्षा पैदा हो।

3) **1955 का नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम** :— इस अधिनियम के अनुसार किसी भी व्यक्ति को सजा मिल सकती है यदि वह अस्पृश्यता या छुआछुत को बढ़ावा दे।

4) **1972 का वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम** :— यह अधिनियम जंगली जानवरों के संरक्षण एवं उनकी रक्षा की बात करता है। इसमें जंगली जानवरों के अलावा पक्षी एवं पेड़—पौधों की सुरक्षा की भी बात शामिल है। इस कारण से यह अधिनियम गैर कानूनी तरीके से जानवरों की खरीद फरोख्त पर प्रतिबंध लगाता है।

5) **1971 का राष्ट्रीय सम्मान के अपमान निरोधक कानून :–** इस अधिनियम से कोई भी व्यक्ति राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रगान तथा संविधान का अपमान नहीं कर सकता है। यह अधिनियम किसी भी प्रकार के अपमान एवं अनादर पर पूर्ण रोक लगाता है।

6) **1980 का वन संरक्षण अधिनियम :–** यह अधिनियम प्रकृति के नुकसान के खिलाफ है। यह पूर्ण रूप से वनों की कटाई या उन पर हो रही बर्बादी पर रोक लगाताा है। यहा तक कि इस अधिनियम के द्वारा वनों का प्रयोग किसी भी मानवीय कार्य प्रणाली के लिए नहीं किया जा सकता।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को स्पष्ट दिशा–निर्देश जारी किये है ताकि इन कर्तव्यों के प्रभावकारी क्रियान्वन के लिये एक अनुकूल वातावरण पैदा किया जा सके। इस संबंध में उच्च न्यायालय ने केन्द्र सरकार को अगस्त 2003 में यह निर्देश दिया कि वह राष्टीय आयोग, संविधान की समीक्षा आयोग तथा वर्मा समिति की सिफारिशों को लागू करे। अनुपमा राव ने अपने एक लेख में वर्मा समिति की सिफारिशों की आलोचना की थी। उन्होंने कहा कि वर्मा समिति राज्य एवं राष्ट से संबंधित नागरिकों के लिए अपर्याप्त रूप से कर्तव्यों पर बल देती है। यह पूरी तरह से नागरिकों को असमान मानती है तथा नागरिकता के लिए कर्तव्य पूर्व शर्त की तरह व्यवहार करती है।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) मौलिक अधिकार एवं मौलिक कर्तव्यों में क्या संबंध है?

....

....

....

....

....

2) मौलिक कर्तव्यों की प्रमुख विशेषताएं कौन–कौन सी है?

....

....

....

....

....

6.4 मौलिक कर्तव्यों का महत्व

मौलिक कर्तव्यों का नैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक महत्व है। यदि कोई नागरिक अपना कर्तव्य ठीक से निभाये तभी वह अपने अधिकारों का सही तरह से इस्तेमाल कर सकता है। अपने कर्तव्यों को पूरा करने के बाद ही आप पर्यावरण एवं आर्थिक विकास को प्राप्त कर सकते हैं। इसके साथ ही आप मानवीय विकास को भी प्राप्त कर सकते हैं। भारत में मौलिक कर्तव्यों को पूरा करने के लिये लोगों में चेतना जागृत हुई है। न्यायालय, नागरिक

समाज संगठन, राजनीतिक दल एवं सरकार ने भी मौलिक कर्तव्यों के महत्व को रेखांकित किया है क्योंकि ये कर्तव्य समाज के संपूर्ण विकास के लिए अनिवार्य है। जैसा कि आपने इस इकाई के अंदर पढ़ा होगा मौलिक कर्तव्यों को संविधान में 42वें संशोधन के बाद शामिल किया था जो कि इंदिरा गांधी सरकार ने आपातकाल के दौरान पारित किया था। मोरारजी देसाई की सरकार ने भी मौलिक कर्तव्यों के प्रावधानों में परिवर्तन नहीं किया। इससे यह साबित हुआ कि मौलिक कर्तव्यों का कितना महत्व है। इन्हीं महत्व को ध्यान में रखते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि ये कर्तव्य व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन लाने तथा नागरिकों में अच्छे गुण पैदा करने के लिए पर्याप्त है। उदाहरण के लिए कुछ स्वार्थी तत्व पर्यावरण को एवं जैव–विविधता को नुकसान पहुंचा रहे हैं, विशेषकर मसूरी–देहरादून क्षेत्र में। वे अपने मौलिक कर्तव्यों का उल्लंघन कर रहे हैं जिसमें उन्हें पर्यावरण की रक्षा एवं जैव–विविधता की रक्षा करने को कहा गया है। इस संबंध में सर्वोच्च न्यायालय ने गैर–कानूनी खनन पर रोक लगाई थी मसूरी–देहरादून बेल्ट में तथा पर्यावरण एवं जैव–विविधता की रक्षा के लिए अन्य सुझाव भी दिये थे। इस प्रकार, न्यायालय ने मौलिक कर्तव्यों की महत्ता को रेखांकित किया तथा उसके संरक्षण के लिए निर्देश भी दिये।

संविधान समीक्षा आयोग जिसके अध्यक्ष एम. एन. वैंकटचलैया थे, उन्होंने भी मौलिक कर्तव्यों के सफल क्रियान्वयन के लिये कुछ सुझाव दिये थे। उनकी कुछ सिफारिशें इस प्रकार थी :–

क) केन्द्र एवं राज्य सरकारें लोगों के बीच चेतना जाग्रत करे ताकि लोग मौलिक कर्तव्यों के बारे में जानकारी हासिल कर सके।

ख) स्वतंत्रता के अधिकार विशेषकर धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार की रक्षा करनी चाहिये तथा अल्पसंख्यकों के अधिकारों का सम्मान होना चाहिये।

ग) लोगों को चुनाव में अपना वोट देने के लिए संवेदनशील बनाया जाना चाहिए क्योंकि वोट डालना उनका कर्तव्य है। इसके साथ ही उन्हें कर देने और सरकार के कार्यो में भागीदारी करने के लिए भी संवदेनशील बनाया जाना चाहिये।

घ) वर्मा समिति की सिफारिशों को तत्काल लागू किया जाना चाहिए जिसमें उन्होंने मौलिक कर्तव्यों के क्रियान्वयन पर अधिक बल दिया था।

ड़) औद्योगिक संगठनों को अपने कर्मचारियों के बच्चों के लिए शिक्षा का प्रावधान करना चाहिये।

अभ्यास प्रश्न 3

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) मौलिक कर्तव्य नैतिक मूल्यों के साथ किस प्रकार से जुड़े हुए है?

....

....

....

....

....

6.5 सारांश

मौलिक कर्तव्य राष्ट्रीय एकता, अखंडता तथा सांस्कृतिक सदभाव बनाये रखने की बात करते हैं। ये विभिन्न समुदाय के लोगों के बीच में आपसी भाईचारा एवं मेलजोल बढ़ाये रखने की बात करते हैं। यद्यपि भूतपूर्व सोवियत संघ विश्व में पहला देश था जिसने मौलिक कर्तव्यों को अपनाया था लेकिन अब सभी देश अपने संविधानों में इनका प्रावधान कर रहे हैं। प्रांरम्भ मे, केवल सैनिक बलों तथा पुलिस के लिए मौलिक कर्तव्यों का उल्लेख था जबकि अन्य लोगों के लिए संविधान में इसका कहीं जिक्र नहीं था। इनको संविधान में 42वें संशोधन के तहत् पहली बार शामिल किया गया था। इन्हें सरदार स्वर्ण सिंह समिति की सिफारिशों के आधार पर लागू किया गया था। बाद में 86वें संशोधन के माध्यम से 6 वर्ष से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए शिक्षा का प्रावधान किया गया, इसे बच्चों के अभिभावकों के लिये मौलिक कर्तव्य माना गया था। मौलिक अधिकार एवं मौलिक कर्तव्यों में अंतर है। मौलिक अधिकारों को कानूनी तौर पर लागू किया जा सकता है लेकिन मौलिक कर्तव्यों को कानूनी तौर पर लागू नहीं किया जा सकता। पी.वी.के.आर.वी. राव ने अनुच्छेद 51ए के प्रभावशील तरीके से लागू करने की बात कही थी। मौलिक कर्तव्यों के उल्लंघन पर सजा का प्रावधान होना चाहिए। 21वीं सदी में मौलिक कर्तव्यों का बड़ा महत्व है।

6.6 संदर्भ सूची

ऑस्टिन, ग्रेनविल (1966), – भारतीय संविधान, राष्ट्र का अभिपत्रः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।

बक्सी, पी. एम (2012), – भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ प्रकाशन।

बसु, डी. जी (1960), – भारत के संविधान का परिचय, कलकत्ता, एस. सी. सरकार & संस प्राइवेट लिमिटेड।

भगवान, विष्णु, विद्या भूषण & वन्दना मोहला (1984),– विश्व के संविधान : एक तुलनात्मक अध्ययन, नई–दिल्ली, स्टर्लिग प्रकाशन।

छागला, एम. सी., पी. बी. मुखर्जी & अन्य – (1977) संविधान संशोधन : एक अध्ययन, रूपक प्रकाशन, कलकत्ता।

कश्यप, सुभाष (1999) हमारा संविधान, एन.बी.टी, नई दिल्ली।

पायली, एम. वी (1994) भारत का संविधान, एस. चांद & कंपनी नई दिल्ली।

राजाराम, कल्पना, (1994) भारतीय राजनीति, नई दिल्ली, स्पैक्ट्रम बुक्स।

श्मन, सुन्दर (1977) मौलिक अधिकार एवं 42वाँ संविधान संशोधन, कलकत्ता, मिनर्वा प्रकाशन।

अनुपमा राव (2003), – मेकिंग गुड सिटिजन्सः टीचिंग फंडामेंटल ड्यूटीज इन स्कूल, ई. पी. डब्लू, जुलाई, 21–2003.

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) 42वां संविधान संशोधन 1976 में तथा 86वां संविधान संशोधन 2002 में।

2) प्राकृतिक वातावरण जैसे जंगल, झील, नदियां तथा जंगली जीवन की रक्षा करने के लिए ताकि सभी जीव जन्तु मिलजुल कर रह सके।

अभ्यास प्रश्न 2

1) मौलिक कर्तव्य एवं मौलिक अधिकार अलग–अलग है। मौलिक अधिकार कानूनी रूप से लागू करने योग्य है जबकि मौलिक कर्तव्य कानूनी तौर पर लागू नहीं किये जा सकते हैं

2) मौलिक कर्तव्यों की प्रमुख विशेषताएें इस प्रकार है :–

   क) मौलिक कर्तव्य नागरिक एक नैतिक प्रकृति के हैं।

   ख) मौलिक कर्तव्य विदेशी नागरिकों पर लागू नहीं होते है, ये केवल भारत के नागरिकों पर लागू होते हैं।

   ग) मौलिक अधिकार एवं मौलिक कर्तव्यों में स्पष्ट अंतर है।

   घ) मौलिक अधिकार कानूनी तौर पर लागू किये जा सकते है जबकि मौलिक कर्तव्य कानूनी तौर पर लागू नहीं किये जा सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न 3

1) मौलिक कर्तव्यों को कानूनी तौर पर लागू नहीं किया जा सकता। इनके सफलतापूर्वक लागू करने के लिए लोगों में नैतिकता की भावना जाग्रत करना आवश्यक है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

संदर्भ सूची

अब्दुल, रहीम पी (1998), राष्ट्र निर्माण के संघीय मापदंड, नई दिल्ली, फेडरल अध्ययन केन्द्र, मानक प्रकाशन।

अंबडेकर, डा. बाबासाहेब (1994), लेख और भाषण, खण्ड 13, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र, सरकार।

बक्षी, पी. एम. (1999), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कंपनी।

बक्षी, पी. एम. (2003), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कंपनी।

बक्षी, पी. एम. (2012), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कंपनी।

बसु, डी. डी. (2011), भारत के संविधान का परिचय, नागपुर, लेक्सिस, नेक्सिस बटरपर्थ, वर्धा।

बसु, डी. डी. (1960), भारत के संविधान का परिचय, कलकत्ता, एस. सी. सरकार एण्ड संस प्राइवेट लिमिटेड।

बसु, डी. डी. (1983), भारत के संविधान पर टिप्पणी, नई दिल्ली प्रेन्टिस हॉल।

भगवान, विष्णु, विद्या भूषण, और वन्दना मोहला (1984), विश्व के संविधान : एक तुलनात्मक अध्ययन, नई दिल्ली, स्टर्लिंग पब्लिसर्स, प्रा. लि.।

चागला, एम. सी. पी. बी. मुखर्जी & अन्य (1977), संविधानिक संशोधन : एक अध्ययन, कलकत्ता रूपक प्रकाशन।

चक्रवर्ती, उमलेन्द्र किशोर (2004), पहचान की खोज : उत्तरी पूर्व भारत में आदिवासी आंदोलन, 1947—1969, कोलकता, द एशियाटिक सोसायटी।

चौबे, एस. के (1976), भारत की संविधान सभाः क्रांति की प्रेरणास्रोत, नई दिल्ली, मनोहर प्रकाशन।

चौबे, एस. के (1999), भारत के उत्तर—पूर्वी राज्यों की पहाड़ी राजनीति : नई दिल्ली, ओरियंट लोंगमेन।

चौबे, एस. के (2009), भारतीय संविधान का निर्माण एवं कार्यप्रणाली : नई दिल्ली, एन. बी. टी.।

दास, सी. बी. (1977), भारत का राष्ट्रपति, नई दिल्ली, आर आर प्रिन्टर्स।

ग्रेनविल ऑस्टिन (2012), भारतीय संविधान : राष्ट्र की आधारशिला, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ग्रेनविल ऑस्टिन (2002), लोकतांत्रिक संविधान की कार्यप्रणाली, भारत का अनुभव, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।

जोन्नेंग आइवर सर (1969), केबिनेट सरकार, कैम्ब्रिज, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

झा, एन.एस. & पी. सी. माथुर, (1999), विकेन्द्रिकरण और स्थानीय राजनीति : नई दिल्ली प्रेस प्रकाशन।

कश्यप, सुभाष, (2011), हमारा संविधान, नई दिल्ली, एन. बी. टी.।

कश्यप, सुभाष, (1995), भारत की संसद का इतिहास, खंड 2, नई दिल्ली, शिप्रा. प्रकाशन

कश्यप, सुभाष, (1997), नागरिक एवं संविधान, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली

खोसला, माधव (2012), ऑक्सफोर्ड भारत संक्षिप्त परिचयः भारतीय संविधान, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

लिटन, जी. के. रवि श्रीवास्तव (1999), असमान साथी : सत्ता संबंध, उत्तर प्रदेश के विकास एवं सत्ता का हस्तांतरण, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

मिश्रा, सलील (2001), सांप्रदायिक राजनीति का वर्णन : उत्तर प्रदेश, 1937–39, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

मुखर्जी, हिरेन (1978), संसद का चित्रण, पुर्नगठन एंव प्रतिविंब, नई दिल्ली, विकास प्रकाशन।

नारंग, एस. ए. (2000), भारतीय सरकार और राजनीति, नई दिल्ली, गीतांजली प्रकाशन

पटनायक, रघुनाथ (1996), भारत में राज्यपाल एवं राष्ट्रपति की शक्तियां, नई दिल्ली, दीप एण्ड दीप प्रकाशन।

पिन्टो, मरीना, (2000), भारत में मेटोपोलीटन सिटी शासन : नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

रमन, सुन्दर (1977), मूल अधिकार एवं 42वां संविधान संशोधन, कलकत्ता, मिनर्वा प्रकाशन, प्रा. लि.।

राव, गोविन्द, एम. निर्विकार सिंह (2005), भारत में संघवाद की राजनीतिक अर्थनीति : नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

सरकार, सुमित (1983), आधुनिक भारत,1885–1947, नई दिल्ली, मैक्मिलन।

शंकर, बी. एल. वेलटिन रोड्रिग्स (2011), भारतीय संसद : लोकतंत्र की कार्यप्रणाली, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY